षोडश संस्कार
(महत्व एवं विधि)
लेखक : डॉ. रमाधार उपाध्याय

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

प्राक्कथन

विविध कर्मों के विविध जन्मों के बहुशः संस्कारों-कुसंस्कारों से आवृत्त मन जब जन्म लेता है, तब कभी विधित्सया कभी विचिकित्सया किं कर्तव्य विमूढ़ अपने अमूल्य मानव जीवन को नष्ट करता हुआ, विभ्रान्त अनेक पशु आदि योनियों में परिभ्रमणार्थ विवश हो जाता है। **'तेने ब्रह्म हृदा य आदिकवये'** (भागवत् १।१।१) के अनुसार जब तक मानव वेदोक्त संस्कारों से सम्पन्न नहीं होगा, तब तक वह मनसा वाचा-कर्मणा स्वयं को कृतार्थ नहीं कर सकता। बिना संस्कारों के मानव तथा पशु में कोई भी भेद नहीं है। पूर्ण मानवता की प्राप्ति के लिए मात्र मानव देहोपलब्धि ही पर्याप्त नहीं। उसके लिए मानवीय संस्कारों की नितान्त आवश्यकता है। आज संस्कारों के अभाव में मानवीय मूल्य-मानवता नष्टप्राय होती जा रही है। संस्कृति का पर्याय मात्र कल्चर माना जा रहा है, जो संस्कृति का वास्तविक अर्थ है ही नहीं। कष्ट से स्वनिर्मित कुछ नियमों को निर्माण कर उस पर चलना कल्चर माना जाता रहा है, न कि वैदिक नियमानुसार संस्कार बद्ध होकर चलना। संपूर्ण विश्व में मानवीय दुर्दशा का यह तांडव अपनी पराकाष्ठा पर पहुंचने का कारण मात्र संस्कारों की ही कमी है।

संस्कार 'सम् उपसर्ग पूर्वक 'कृ' धातु से भूषण अर्थ में सुट्' आगमपूर्वक 'क्तिन्' प्रत्यय होने से संस्कृति शब्द सिद्ध होता है। संस्कार भी संस्कृति के समान ही है। संस्कार से मलापनयन अर्थात् मैल की शुद्धि करना होता है। महर्षि हारीत ने कहा है 'गर्भाधानादि संस्कारों से संस्कृत व्यक्ति ऋषितुल्य होकर देवों के समान हो जाता है। मनु ने कहा है कि गर्भाधान-जातकर्मादि संस्कारों से द्विजों के बीज तथा गर्भ संबंधी दोष (पाप) नष्ट हो जाते हैं-

गार्भे र्होमैजोतकर्म चौल मौञ्जी निबन्धनैः।
बैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामपमृज्यते॥

पुनश्च लिखा कि संस्कारों से यह शरीर ब्रह्म प्राप्ति के योग्य बनाया जाता है। मनुस्मृति। जिसके संस्कार विधिवत् हुए है उसी का मन तथा इन्द्रियों पर नियन्त्रण तथा इहलोक परलोक में सुख प्राप्त कर सकता है। बिना संस्कारों के नहीं

संस्कृतस्य हि दान्तस्य नियतस्य यतात्मनः।
प्राज्ञस्यानन्तरा सिद्धिरिह लोके परत्र च॥ (मनु स्मृति)

क्या कारण है कि पूर्व समय में बहुत अधिक शिक्षा से हीन व्यक्ति भी शान्त-दान्त श्रद्धा-भक्ति-ज्ञान युक्त होकर इहलोक में सुख शान्ति तथा योगियों की तरह मृत्यु प्राप्तकर मुक्त होता था। स्वयं भगवान् की आज्ञा है कि शास्त्रानुसार जीवन जीने से ही जीव पर मैं प्रसन्न होता हूं, अन्यथा मेरी उस जीव पर कृपा नहीं होती-

श्रुतिस्मृती ममैवाज्ञे यस्तु उल्लंघ्य वर्तते।
आज्ञाच्छेदी मम द्रोही वैष्णवोऽपि न मे प्रियः॥

एतावता भगवदाज्ञानुसार जीवन जीने से ही व्यक्ति की मुक्ति हो सकती है, अन्यथा भवाटवी में गमनागमन से मुक्ति संभव नहीं है। संस्कार शारीरिक शुद्धि से लेकर मानसिक शुद्धि और आध्यात्मिक शुद्धि का मुख्य साधन है। यदि शारीरिक संस्कार मुंडन-कर्ण बेध अन्नप्राशन विवाहादि के द्वारा शरीरतः अध्यात्म पर्यन्त यात्रा है बिना संस्कारों के जो सीधे ब्रह्मज्ञानी बनकर आध्यात्मिक होने का दावा करते हैं वह सर्वथा झूठा है यहाँ शुकदेवजी को 'अनुपेतमपेत' प्रमाण मानना मात्र अज्ञान है। वे स्वतः संस्कृत महापुरुष थे, इस तरह के सभी लोग नहीं हो सकते। बिना संस्कारों के बुद्धि की पवित्रता हो पाना संभव नहीं संस्कार शौचेन परम पुनीते शुद्धाहि बुद्धिः किल काम धेनुः॥

वर्तमान में मात्र उदर भरने की विधि ही सर्वश्रेष्ठ धर्म-संस्कार तथा सर्वोपरि पुरुषार्थ मान्य है। संस्कार विहीन समाज आज पशुवत् हो रहा है। गर्भजन्यतः मरणपर्यन्त किसी भी विकार को संस्कृत नहीं किया जा रहा है। अतः चारों वर्णों को संस्कारों की अपनी-अपनी मर्यादा तथा विधि पूर्वक होने की आवश्यकता है। अन्यथा राष्ट्र में संस्कार विहीन आचार-विचार मात्र पतन का हेतु होगा। जिससे धर्म हानि ही नहीं आत्महानि भी होगी।

धर्मानुरागिणामनुचरः

रामाधारः

॥ श्री हरिः ॥

विषयानुक्रमणिका

॥ श्री हरिः ॥

चालीस संस्कार – विधिपूर्वक संस्कारों से संस्कृत व्यक्ति अनेक जन्मों के तमोगुणादि कारणों से मुक्त होकर सत्वगुणी जीवन धारण कर मानव योनि के वास्तविक श्रेय को प्राप्त कर सकता है वैसे संस्कारों में (१) गर्भाधान (२) पुंसवन (३) सीमन्तोन्नयन (४) जातकर्म (५) नामकरण (६) अन्नप्राशन (७) मुण्डन (८) उपनयन (९) ऋग्वेद का आरंभ (१०) यजुर्वेदारम्भ (११) सामवेदारम्भ (१२) अथर्ववेदारम्भ (१३) समावर्त्त स्नान (१४) विवाह (१५) देवयज्ञ (१६) पितृयज्ञ (१७) मनुष्ययज्ञ (१८) भूतयज्ञ (१९) ब्रह्मयज्ञ (२०) अगहन कृष्णाष्टका श्राद्ध(२१) पौष कृष्ण सप्तमी श्राद्ध (२२) माघ कृष्णाष्टका श्राद्ध (२३) श्रावणी कर्म (२४) आग्रहायणी यज्ञ (२५) चैत्रपूर्णिमा यज्ञ (२६) आश्विन पूर्णिमा यज्ञ (२७) अग्नियों का स्थापन (२८) अग्निहोत्र (२९) दर्श पोर्णमास यज्ञ (३०) आग्रयणेष्टिक (नवान्नेष्टि) (३१) चातुर्मास यज्ञ (३२) पशुबन्ध यज्ञ (३३) सौत्रामणि यज्ञ (३४) अग्निष्टोम (३५) अत्यग्निष्टोम यज्ञ (३६) उक्थ्य (३७) षोडशी (३८) वाजपेय (३९) अतिरात्र (४०) अप्तोर्याम इस प्रकार के ४० संस्कार द्विज के होने का प्रमाण स्मृति में है। (गौतम स्मृति ८।१३) ४८ संस्कारों में ८ संस्कार आत्मगुणीय हैं वे इस प्रकार है।

'दया सर्वभूतेषु क्षान्तिरनसूया शौचमनायासो मंगलमकार्पण्यमस्पृहेति ॥'

१. प्राणीमात्र पर दया, २. क्षमा, ३. अनसूया, ४. शौच, ५. अनायास (क्षुद्र कार्य न करना), ६. मंगल (सदा उत्साही-आनंदी), ७. अकार्पण्य, ८. अस्पृहा (कोई इच्छा न करना। यही ४८ संस्कार गौतम धर्मसूत्र में बताये गये है।)

सोलह संस्कार :- प्रायः षोडश संस्कार की व्याख्या सर्वत्र प्राप्त होती है। जिसमें प्रथम गर्भाधन (२) पुंसवन (३) सीमन्त (४) जातकर्म (५) नामकरण (६) निष्क्रमण (७) अन्नप्राशन (८) मुण्डन (९) कर्णवेध (१०) यज्ञोपवीत (११) वेदारंभ (१२) केशान्त (१३) ब्रह्मचर्य समाप्ति स्नान (१४) विवाह (१५) विवाहाग्नि ग्रहण (१६) अन्त्येष्टि संस्कार

कन्या के संस्कार :- बालक के संस्कार मंत्रयुक्त होंगे किन्तु कन्या के गर्भाधान से कर्णवेध तक नौ संस्कार बिना वेद मंत्रों के तथा दशवां विवाह संस्कार वेदोक्त मंत्रों से सम्पन्न होना चाहिये। (व्यास स्मृति १/१५-१६)

शूद्रों के संस्कार :- शूद्रों के संस्कार गर्भाधान से लेकर विवाह पर्यन्त दशों संस्कार

अमंत्रक ही होंगे उनमें मंत्रों की आवश्यकता नहीं है। (व्यास स्मृति १/१५-१६)

कौन संस्कार किस आयु में करें

गर्भ स्थापन के समय गर्भाधान संस्कार करें। गर्भाधान से तीसरे माह में पुंसवन संस्कार करें। (व्यास स्मृति १/१६ याज्ञवल्क्य स्मृति ३/६५ तथा १/११ शंख स्मृति २१९) ८वें मास में **सीमन्त संस्कार** होना चाहिये (व्यास स्मृति १/१७, याज्ञवल्क्य १/ ११, शंख स्मृति २१२, विष्णु स्मृति १/१) सन्तान उत्पन्न होने पर जातकर्म संस्कार तथा ग्यारहवें दिन **नामकरण संस्कार** (व्यास स्मृति १/१७ याज्ञवल्क्य स्मृति १/१२) किन्तु मनुस्मृति में जन्म से दसवें-बारहवें दिन या जिस दिन तिथि मुहूर्त-नक्षत्र शुभ हो उसी दिन नामकरण करना चाहिये। (मनु. १०/१२) अशौच समाप्त होने पर ही नामकरण करें (शंख स्मृति २१२)

निष्क्रमण संस्कार चौथे महिने में करें (व्यास १/१७ मनु २/३४ याज्ञवल्क्य १/१२ शंख २/५) छटवें महिने में **अन्नप्राशन संस्कार** होना चाहिये (व्यास १/१८ मनु. २/३४ याज्ञवल्क्य १/१२ विष्णु १/१२ शंख २/६) **मुण्डन संस्कार** अपनी वंश परंपरा के अनुसार होना चाहिये 'चूडाकर्म कुलोचितम्' (व्यास १/१८, याज्ञ. १/१२ शंख २/५) किन्तु मनु ने प्रथम या तृतीय वर्ष (२/३५) विष्णु स्मृति में तृतीय वर्ष में मुण्डन का नियम रखा है (१/१२) **कर्णवेध संस्कार** - मुण्डन के पश्चात् छटवें सातवें-आठवें महिनों में अथवा विषम वर्षों में कर्णवेध करें।

यज्ञोपवीत संस्कार - ८वें वर्ष में ब्राह्मण का, ११वें वर्ष में क्षत्रिय का, १२वें वर्ष में वैश्य का यज्ञोपवीत संस्कार करें। (व्यास १/१९, विष्णु १/९३, शंख. २/६ वसिष्ठ ११/ ४४) किन्तु मनुस्मृति में ब्रह्म विद्या वाले विप्र बालक का ५वें वर्ष में, क्षत्रिय ६वें तथा वैश्य का ८वें वर्ष में जनेऊ लिखा है (मनु २/३७) ब्राह्मण का वसन्त ऋतु में क्षत्रिय का ग्रीष्मऋतु में और वैश्य का शरद ऋतु में होना चाहिये। यदि इस वर्षावधि का अतिक्रमण होता है तो वह (व्रात्य) हो जाता है। तब प्रायश्चित करके (व्रात्यस्तोम यज्ञ) करना चाहिये।

१. गर्भाधान संस्कार :-

विवाह होने के पश्चात् तीन रात्रि तक पति-पत्नी ब्रह्मचर्य व्रत धारण करें। किन्हीं आचार्यों का मत है कि पति के घर में पत्नी के आने पर जब तक वह रजस्वला नहीं हो जाती, तब तक ब्रह्मचर्य पूवर्क रजोधर्म की प्रतीक्षा करे। (गोभिल गृह्य सूत्र ७-८) तीनों दिन तक पति-पत्नी हविष्यान्न व्रतपूर्वक संयम करें।

गर्भाधान मुहूर्त :- गर्भाधान मलमास गुरु तथा शुक्र के अस्त में भी हो सकता है। (निर्णय सिन्धु पृ. ४६९) चतुर्थी-षष्ठी-अष्टमी-पूर्णिमा-अमावास्या-दोनों पक्ष की चतुर्दशी को गर्भाधान में त्यागना चाहिये। सोमवार, गुरुवार, शुक्रवार तथा बुधवार के दिन गर्भाधान में श्रेष्ठ है। श्रवण, रोहिणी, हस्त, अनुराधा, स्वाती, रेवती, तीनों उत्तरा, शतभिषा गर्भाधान में श्रेष्ठ है। पुष्य-धनिष्ठा-मृगशिर-अश्विनी चित्रा और पुनर्वसु ये मध्यम नक्षत्र हैं। अन्य नक्षत्र नेष्ट (अग्राह्य) हैं। (निर्णय सिन्धु पृ. ४८५)

गर्भाधान विधि - जिस समय गर्भाधान करना हो तो ऋतुमयी स्त्री के रजस्वला होने के पश्चात् चौथी रात्रि में गर्भाधान करने से पुत्र होता है किन्तु वह अल्पायु या निर्धन होता है। पांचवीं रात्रि में गर्भाधान करने से बहुत कन्या को जन्म देने वाली कन्या होती है। छटवीं रात्रि में गर्भाधान से मध्यम कोटिवाला पुत्र, सातवीं रात्रि के गर्भाधान से सन्तान हीन कन्या, आठवीं रात्रि में गर्भाधान से सुन्दर पुत्र, नवमीं रात्रि में गर्भाधान से ऐश्वर्य शालिनी कन्या, दशवीं रात्रि में उत्तम पुत्र, ग्यारहवीं रात्रि में धर्महीन कन्या, बारहवीं रात्रि में उत्तम पुत्र, तेरहवीं रात्रि में पापिनी कन्या, चौदहवीं रात्रि में धर्मज्ञ-कृतज्ञ-आत्मज्ञानी और दृढ़व्रती पुत्र होता है। (निर्णय सिन्धु पृ ४८६ तथा व्यास स्मृति)

रजस्वला होने के पश्चात सम रात्रियो में गर्भाधान करने से पुत्र ८-१०-१२-१४-१६ तथा विषयम रात्रि ५-७-९-११-१३ में कन्या जन्म होता है। (हेमाद्रि निर्णय पृ. ४८६)

यद्यपि चतुर्थ दिन स्त्री शुद्ध होती है। पर देवकर्म और पितृकर्म के लिए पांचवें दिन शुद्ध होती है। चतुर्थ दिवस में, विशेष परिस्थिति में गर्भाधान के योग्य होती है। (निर्णय पृ. ४८६)

यदि एकादश स्थान में चंद्रमा हो तो अति श्रेष्ठ लक्षण वाला पुत्र उत्पन्न होता है। (याज्ञ. निर्णय पृ. ४८७) बुद्धिमान व्यक्ति को एक रात्रि में एक बार ही मैथुन करना चाहिये। (निर्णय पृ. ४८७) दिन में दोनों सन्ध्याओं में सायंकाल तथा ब्रह्म मुहूर्त में, श्राद्ध के दिन-ग्रहण में संक्रान्ति में, रात्रि के प्रथम प्रहर में गर्भाधान कभी न करें। उपद्रवी चरित्रहीन सन्तान होगी। (हेमाद्रि निर्णय पृ. ४८७)

गर्भाधान में चन्द्रबल- लग्न में चन्द्र, अन्न-धन का नाश, द्वितीय में सुख, तृतीय चंद्र रोग, चतुर्थ में कार्य हानि, पांचवें स्थान में चंद्र लक्ष्मी, छटवें में स्त्री, सातवें में मृत्यु, आठवें में राज भय, नवम में सुख, दशवें में राज्य, ग्यारहवें में आय, बारहवें में अनावश्यक व्यय होता है। (धर्म सिन्धु पृ. २३९)

जिस दिन गर्भाधान मुहूर्त है उस दिन प्रातः नित्य कर्म से निवृत्त होकर संकल्प करें-ममास्यां भार्यायां संस्कारातिशय द्वारा अस्यां जनिस्य माण सर्वगर्भाणां बीज गर्भ समुद्भवैनो निर्वर्हण द्वारा श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं गर्भाधानाख्यं कर्म करिष्ये। स्वस्ति वाचन करावे गणेश-गोरी, पुण्याहवाचन-मातृकापूजन नांदीश्राद्ध विष्णु को ६ आहुति, प्रजापति को १ आहुति घृत से देवे। अश्वगंध के रस को पत्नी के दक्षिण नासिका छिद्र में 'उदीर्ष्वात' मंत्र के द्वारा डाले। (धर्मशास्त्र पृ २४८, निर्णय पृ. १३४) पूर्व मुख बैठी हुई पत्नी का सिर हाथ से छुए और 'अपनश्च' और 'बधेन च' इन दो सूक्तों को जपे 'अनिस्तु' और 'विश्रवस्तम्' और 'सूर्यो नो दिव' इत्यादि पाँच मंत्रों से सूर्य की स्तुति करें। इसके पश्चात् स्विष्टकृत होम करके पुरुष स्त्री की गोद में बिजोरा-नींबू-नारियल-केला-खजूर-सुपारी-नारंगी आदि फल देवे। ब्राह्मणों को दक्षिणा तथा भोजन करावे। अपने बंधु-बांधवों के साथ स्निग्ध भोजन करें। तब रात्रि में गर्भाधान कर्म करे। (लघु आश्वलायन स्मृति गर्भाधान प्रकरण पृ १३३)

गर्भाधानकर्ता गर्भाधान के पूर्व इष्टदेवता-कुलदेवता का स्मरण कर तीन बार योनि का स्पर्श इस मंत्र से करे- 'ॐ विष्णुर्योनि कल्पयतु त्वष्टा रुपाणि पिंशतु। आ सिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु में। गर्भं धेहि सिनीवाली गर्भं धेहि सरस्वति। गर्भं ते अश्विनौ देवावा धत्ता पुस्करस्रजा। हिरण्ययी अरिणीं यं निर्मन्थतो अश्विना। तं ते गर्भं हवामहे दशमे मासि सूनवे॥'

(खादिर ग्रह्यसूत्र ४/१६) (ऋग्विधाने १०/१८४/१-३)

खादिर ग्रह्यसूत्रकार गर्भाधान के दिन में वधू को अन्वारब्ध होकर महाव्याहतियों से तीन आहुति, महाव्याहति से १ आहुति देकर, अग्नि, वायु, चंद्र और सूर्य को संबोधन करे। फिर हवन समाप्त कर लाये हुए जल से पति स्वयं पत्नी को स्नान करावे। फिर ब्राह्मण भोजन करावे। मानव ग्रह्यसूत्र १/१४ में लिखा है कि विवाह के पश्चात १ वर्ष या १२ रात्रि या ३ रात्रि तक ब्रह्मचार्य से रहे। विवाह काल में बंधी हुई कमर की मेखला स्त्री की तभी छोड़े जब गर्भाधान करे। समागम के पूर्व पति पत्नी को देखता हुआ 'अपश्यंत्वां मनसा दीध्यानां स्वा यां तनूं ऋत्विये बाधमानाम्। उपमा मुच्चायुवति र्ब भूयाः प्रजाय स्वप्रजयाः पुत्रकामे।' अहं गर्भमदधामोषधीष्वहं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः। अहं प्रजा अजनयं पृथिव्या अहं जनिभ्योऽपरीषु पुत्रान्। मंत्रों को पढ़े फिर पुरुष 'करत्' कहकर पत्नी के उपस्थेन्द्रिय का और 'जननी' कहकर अपनी उपस्थेन्द्रिय का स्पर्श करे अन्त में 'वृहत' कहकर गर्भाशय को छुए।

प्रत्यवाय : गर्भाधानांग होम के न करने पर पारिजात में आश्वलायन ने कहा है कि

उस स्त्री में उत्पन्न पुत्र दोषवाला होता है। यदि बिना होम तथा गर्भाधान नियम के गर्भ स्थिर हो तो पति-पत्नी के हाथ से गोदान करके तब पुंसवन संस्कार करना चाहिये। (निर्णय सिन्धु पृ. ४८९)

गर्भाधान के पश्चात्-गर्भाधान के पश्चात् मैथुनकर्ता को स्नान करना चाहिये। यदि बिना ऋतु के गमन करता है वह मूत्रवत् शुद्धि करे अर्थात् चार कुल्ला तथा आचमन करे।

ऋतौ तु गर्भ शंकित्वात् स्नानं मैथुनिनः स्मृतम्।
अनृतौ तु यदा गच्छेच्छौचं मूत्र पुरीषवत्। (निर्णय पृ. ४८९) (ऋतुगमन पराशर)
स्त्री शय्या त्याग के पश्चात् बिना स्नान के ही शुद्ध हो जाती है।
(निर्णय सि. पृ. ४९३)

२. पुंसवन संस्कार - गर्भाधान के पश्चात् तृतीय मास में पुंसवन संस्कार करना चाहिये। पुंसवन संस्कार से निश्चित पुत्र की प्राप्ति होना कहा है। इसी माह में अंग प्रत्यंगों का निश्चय होता है

'कुर्यात्पुंसवनं मासि तृतीयेऽनवलोमनम्॥'
(लध्वाश्वलायन स्मृति गर्भ प्रकरण ३/९)

यह कार्य पुरुष नक्षत्रों में करे। यह नक्षत्र-पुष्य पुनर्वसु, अश्विनी, हस्त, मूल, तीनों उत्तरा, मृगशिर, श्रवण रेवती और अनुराधा में करे। (तथैव ३१३) रिक्ता ४-१४-९ तिथियों को न लेवे पर्व भी ग्रहण न करे। पति पत्नी का चंद्रबल भी देखे। (निर्णय सि.पृ. ४९३) ज्योतिर्निबन्ध में वसिष्ठ ने कहा है-शानिवार को पुंसवन से मृत्यु सोमवार को तन हानि, बुधवार को पुंसवन करने से सन्तान की मृत्यु शुक्रवार को पुंसवन करने से काकबन्ध्या (एक सन्तान वासी बन्ध्या) होती है। रविवार-मंगलवार-गुरुवार को पुंसवन करने में स्त्री को पुत्र लाभ होता है। (निर्णय पृ. ४९३)

विधि - संकल्प- अस्याः मम भार्यायाः उत्पत्स्यमान गर्भस्य बैजिक गार्भिक दोष परिहारार्थ श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थ पुंसवन करिष्ये। गणपति-मातृका-कलश पुण्याहवाचन-नांदी श्राद्ध करे। (संस्कार प्रकाश) फिर उत्तराग्र कुशा वाली आसन पर तृतीय मास गर्भवती वधू को बिठावे। पति भी उसको गोद में लेकर बैठे अथवा पीछे बैठे। पति अपने दाहिने हाथ से वधू के दाहिने कंधे के ऊपर से हाथ ले जाकर वधू की नाभि को अच्छे प्रकार से स्पर्श करे मंत्र बोले-

'पुमाꣳसौ मित्रावरुणौ पुमाꣳस सावश्विनावुभौ।
पुमानग्निश्चवायुश्च पुमान् गर्भस्तवोदरे।' (गोभिल ग्रह्य २१६/५-१०)

तब प्रार्थना करे कि मेरी स्त्री के गर्भ में मांस-रुधिर भक्षिका अलक्ष्मी रूपी राक्षसी तथा उसको गणों का दूर कीजिये। कल्याण और संपूर्ण सौभाग्य देने वाली महालक्ष्मी है वे इसमें प्रवेश करें। फिर पवमान अग्नि की स्थापना करके प्रजापति को चरु की आहुति देवे (धर्म सिन्धु पृ. २७४)

ईशान कोण में जो वटवृक्ष हो उस वृक्ष के स्वामी को कुछ मूल्य देकर (२१ जौं दाना या २१ उड़द देवे) फिर उस वृक्ष से एक डाली का अग्र भाग जिसमें नुकीला शुंग होता है वह तोड़े परंतु उसके दोनों ओर फल होना चाहिये। उसका निरीक्षण करे कि उसमें कीड़े न हों, सूखा न होवे स्वस्थ होवे। फिर शुंग (वटवृक्ष के अग्रभाग से प्रार्थना करें।) 'हे शुंगे त्वं यदि 'सौमी' सोम देवतायाः प्रिया असि तर्हि सोमाया राज्ञे सोमराज प्रीत्यर्थ मेव 'त्वां' परिक्रीणामि। त्वं यदि वारुणी वरुणदेवतायाः प्रिया असि तर्हि तस्मै वरुणाय राज्ञे एव त्वां परिक्रीणामिशात्वं यदि वसुभ्यः वस्वष्ट कानां प्रीत्यर्थ-मेवोत्पन्ना 'असि' तर्हि 'वसुभ्यः' एवं त्वां परिक्रीणामि ।३।' त्वं यदि रुद्रेभ्यः रुद्राणामेकादशानां प्रीत्यर्थ मेवोत्पन्ना असि तर्हि रुद्रेभ्यः एव त्वां परिक्रीणामि ।४। त्वं यदि आदित्येभ्यः द्वादशादित्यानां प्रीत्यर्थ मेवोत्पन्ना असि तर्हि आदित्येभ्यः एव त्वा परिक्रीणामि ।५। त्वं यदि मरुदभ्यः एकोनपंचाशतां मरुतां प्रीत्यर्थ मेवोत्पन्ना असि तर्हि मरुदभ्यः एव त्वां परिक्रीणामि ।६। यदि विश्वेभ्यो देवेभ्यः सर्व देव प्रीत्यर्थमेवोत्पन्ना असि तर्हि विश्वेभ्यो देवेभ्यः एवत्वा परिक्रीणामि ।७। (गोमिल सूत्र २/६/५-१०)

उस शुंग को वृक्ष से उखाड़ या तोड़ कर प्रार्थना करे हे औषधि गण। तुम सब प्रसन्न होकर इस वधू में वीर्य साधन करो। जिससे यह कष्टरहित प्रसव करे। इस वट शुंग को तृण से ढंककर रक्षा करे। फिर पत्थर की शिला को अति स्वच्छ करे किसी ब्रह्मचारी से या पतिव्रता या ब्राह्मण कुमारी से उसे शिला पर पिसवावे। शीघ्रता से पीस के लाकर कुशासन पर पूर्व की ओर सिर करके लेटी हुई वधू के दाहिने नाक में वह पिसा हुआ रस डाले या सुंघा देवे। फिर इस मंत्र का पाठ करें। मंत्र-'ऊं पुमानग्निः पुमानिन्द्रः पुमान्देवो बृहस्पतिः। पुमाछ्ठ सं पुत्रं विन्दस्व तं पुमाननुजायताम्।' (गोभिल गृह्यसूत्र २/६/१०-१२) इस प्रकार पुंसवन कर्म करें। पीछे देव विसर्जन करे यदि यह पुंसवन कर्म न करे तो इसका प्रायश्चित्त करने में पादकृच्छ्र व्रत करे। यदि पुंसवन काल में पति की उपस्थिति किसी कारण से न हो तो ऐसी परिस्थिति में पुरोहित या देवर के द्वारा यह कर्म करें या वंश कुटुम्ब का कोई अन्य व्यक्ति इस कर्म को संपन्न करे।

गर्भाधानादि संस्कर्ता पतिः श्रेष्ठतमः स्मृतः।
अभावे स्वकुलीनः स्याद् बान्धवो वान्यत्र गोत्रजः॥ (निर्णय सि.पृ. ४९२)

पुंसवन संस्कार के पश्चात् १० ब्राह्मणों या अधिक विप्रों को भोजन करावे।

३. सीमंतोन्नयन संस्कार- गर्भ के स्पन्दन (चलने-हिलने) पर सीमंतोन्नयन संस्कार करे। द्विज स्त्रियों को गर्भ के चौथे-छटवें या आठवें माह में यह संस्कार करना चाहिये।

चतुर्थे सावने मासि षष्ठे वाप्यथ वाष्टमे॥ (निर्णय पृ. ४९४)

रिक्ता तिथि में न करे। मंगलवार-गुरुवार तथा रविवार में यह संस्कार करे। प्रयोग रत्न में सोम, बुध, गुरु-शुक्रवार को भी कहा है।

कालविधान में कहा है कि पुष्य, हस्त, पुनर्वसु, श्रवण, मृगशिरा, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा नक्षत्र लेवें। अष्टमी, षष्ठी, रिक्ता, चतुर्दशी, नवमी, चतुर्थी, अमावस्या तथा पिता की मृत्यु तिथि त्याग कर अन्य तिथियाँ शुभ हैं। जयन्त के मत से पुनर्वसु-पुष्य, हस्त, अनुराधा, अश्विनी, मूल, श्रवण, रेवती, रोहिणी और मृगशिर नक्षत्र को ग्रहण करे। यह पुरुष संज्ञक नक्षत्र है। इन नक्षत्रों का भी आदि-अन्त का त्याग करे। मध्य का भाग ग्रहण करे। वसिष्ठ ने कहा है कि यदि चतुर्दशी-चतुर्थी-अष्टमी-नवमीं-षष्ठी और द्वादशी ये पक्षच्छिद्र हैं यदि अत्यावश्यता से इन्हीं तिथियों में करना हो तो चतुर्दशी की पांच घड़ी, चतुर्थी की आठ घड़ी, अष्टमी की नौ घड़ी और द्वादशी की आरंभ की दश घड़ी का त्याग कर दे।

बृहस्पति ने कहा है कि सीमंत संस्कार में कृष्णपक्ष को शुभ कहा है नारद ने कहा है कि ब्राह्मण तथा क्षत्रिय का सीमंत दिन में वैश्य का संस्कार रात्रि में भी हो सकता है।

देवल का कथन है कि सीमंत संस्कार प्रथम गर्भ में ही करे किन्तु हेमाद्रि का मत है कि नहीं प्रत्येक गर्भ में सीमंत करना चाहिये यदि सीमंत संस्कार किये बिन ही प्रसव हो जावे तो पुत्रवती स्त्री विधिवत् पुनः संस्कार के योग्य होती है। इस संस्कार में ब्राह्मण भोजन करावे जिसमें चावल द्वारा निर्मित खीर या भात का भोजन आवश्यक है। जो ब्राह्मण इसमें भोजन करें उनको 'अराइवे' इस मंत्र का सौ बार जप अवश्य करना चाहिये। (निर्णय सिन्धु पृ. ४९४-९५)

सीमंत संस्कार पति के बिना किसी अन्य को करने का अधिकार नहीं है। (धर्म सिन्धु पृ. २७३)

विधि :- संकल्प- मम भार्यायाः गर्भावयवेभ्यस्तेजो वृद्धयर्थं क्षेत्रगर्भयोः संस्कारार्थं प्रतिगर्भ समुद्भवै नो निबर्हणेन बीजकोत्पत्ति अतिशय द्वारा परमेश्वर प्रीत्यर्थं सीमंतोन्नयनाख्यं संस्कार कर्म करिष्ये।

निर्वघ्नता के लिए गणपति गौरी, पुण्याहवाचन मातृका पूजन नांदी श्राद्ध करे। वेदी

बनाकर कुशकंडिका करे फिर ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये न मम ॐ इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय न मम। ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये न मम। ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय न मम। ॐ अग्नये स्वष्टिकृते स्वाहा इदमग्नये स्वष्टिकृते न मम। फिर नवाहुति करे। संस्रव प्राशन, पूर्णपात्र दान करे। नवाहुति के पूर्व अग्नि में विष्णु भगवान् के लिए अग्नि में ६४ आहुति देवे। पुरुष सूक्त या विष्णु मंत्रों से। (संस्कार प्रकाश पृ. २२)

अब गर्भिणी पत्नी को अग्नि कुण्ड के पश्चिम भाग में उत्तराग्र कुशा बिछाकर पूर्वाभिमुख बिठावे। पति पत्नी के केश खोले, उसके पीछे की ओर खड़ा होवे। उदुम्बर (गूलर) की टहनी जिसमें २ फल लगे हों और पीपल की टहनी तथा तीन कुशाओं को एकत्रित करके पति स्त्री के बालों के मध्य से केशों को दो भागों में विभाजित कर दे (अर्थात् मांग निकाल दे)। मानव गृह्य सूत्र में कहा है कि सीमंत संस्कार में अग्नि में जया आदि होम करके पश्चिम में बैठी पत्नी के केश खोलकर उनमें गाय का मक्खन लगावे फिर साही का कांटा जिसमें तीन जगह श्वेत हो और पत्तों सहित शमी की डाली को इक्ट्ठा करके 'पत्नीमग्निरदात्' मन्त्र पढ़कर उसमें माँग निकाले। (मानव गृह्यसूत्र १/१५) इसी समय इन तीन मंत्रों का पाठ करे- (१) ॐ भू र्विनयामि। (२) ॐ भुवर्विनयामि (३) ॐ स्वर्विनयामि इन मंत्रों से तीन बार माँग बनाये। तत्पश्चात् उन दो भाग किये हुए केशों का जूड़ा बना देवे। मंत्र पढ़े-ॐ अयमूर्जान्वतो वृक्षऊर्जीव फलिनी भ्व। फिर घी-दूध-शकर डालकर बनी हुई खीर पत्नी को दिखावे, जो गोदुग्ध से निर्मित हो (जरसी गाय, विदेशी गाय का दूध न होवे।) पति उससे खीर दिखाकर पूछे कि तुम इसमें क्या देखती हो, बधू उत्तर में कहे कि 'प्रजा'। फिर मंगलाशीष मंत्रपाठ होवे। तथा भगवत्स्मरण पूर्वक कुछ स्तोत्र पाठ कीर्तन करे। फिर बधू देव विसर्जन करके उसी खीर को जो पति ने दी है उसको खावे। ब्राह्मणी बधुएँ उसको आशीर्वाद दें कि तुम 'श्रेष्ठ सुयोग्य पुत्रवाली होओ।' इस प्रकार सीमंतोंन्नयन संस्कार सम्पन्न करे।

श्रेष्ठस्त्रियाँ बधू को उपदेश करें कि जिस कार्य में अति कष्ट हो उस कर्म को मत करो।

मा कुरु क्लेशदं कर्म गर्भ संरक्षणं कुरुं॥

(आश्वलायन स्मृति ३/१४)

ब्राह्मणों को भोजन करावें। दक्षिणा देवें

(गोभिल गृह्यसूत्र पृ. ९२, तुलसी पीठसो (म जुलाई फ पृ. ९ स्वामी श्री रामभद्राचार्य तुलसी पीठाधीश्वर, संस्कारांक पृ २९२)

4. जातकर्म संस्कार -

शीघ्र प्रसव उपाय- जब प्रसव करने वाली पत्नी को प्रसव वेदना हो तभी तिल का तेल दूर्वा के द्वारा १०८ मंत्र पढ़कर दूर्वा दक्षिणावर्ती घुमाता रहे-मंत्र-

ॐ हिमवत्युत्तरे पार्श्वे शबरीनाम यक्षिणी।

तस्या नूपुर शब्देन विशल्या स्यात्तु गर्भिणी स्वाहा॥

इस मंत्र से तिल तेल अभिमंत्रित कर कुछ गर्भिणी को पिला देवे। शेष उसके पेट पर लेपन कर देवे। इससे शीघ्र प्रसव होता है। पंद्रह यंत्र सूतिकागार में लिख देवे। पंद्रह यंत्र लिखकर गर्भवती को दर्शन करा देवे इससे शीघ्र प्रसव हो जाता है। शीघ्र प्रसव के लिए वेद के इस मंत्र का जप करावे- मंत्र-

'ॐ अवैतु पृश्निः शैवलꣳ शुनेजराद्यत्तवे नैवमार्ठसेन पीवरीन कस्मिश्च नायत न मव जरायुपद्यताम।'

इस मंत्र के जप कराने से भी शीघ्र प्रसव होता है।

जातकर्म - पारिजात में वसिष्ठ ने कहा है कि पुत्र जन्म श्रवण से ही पिता पहिले पुत्र का मुख देखे ऐसा करने से वह पितृऋण से मुक्त हो जाता है। किन्तु पुत्र मुख देखने में विलम्ब न हो जावे अतः सुनते ही पहिले सवस्त्र (वस्त्र सहित) स्नान करे। दिन या रात्रि जब भी श्रवण करे तुरन्त स्नान करे। शीतऋतु में भी शीतलजल से स्नान करे। मनु ने कहा है कि नाल छेदन के पूर्व ही जातकर्म संस्कार करना चाहिये।

प्राङ्नाभिवर्द्धनात्पुंसो जातकर्म विधीयते। बर्द्धनम्-छेदनम्

अभी सूतक नहीं है, सूतक नाल छेदन के पश्चात् ही लगता है।

विधि- जातकर्म हेतु पिता संकल्प करे-

संकल्प - ममास्य बालस्य गर्भाम्बुपान जनित सकल दोष निबर्हणायु र्मेधा बुद्धि वीजगर्भ समुद्भवै नो निबर्हण द्वारा श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं जातकर्म करिष्ये।

पश्चातृ गणपति पूजन, पुण्याहवाचन, मातृका पूजन-नांदीश्राद्ध जातकर्म करे।

यदि जन्म के समय कोई मृत्यु सूतक हो या पिता परदेश में हो तो जब घर में आ जावे या मृत सूतक समाप्त हो जावे, तब मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती या रोहिणी तीनों उत्तरा या पुनर्वसु, स्वाति, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा अथवा अश्विनी, पुष्य, हस्त नक्षत्रों में जातकर्म व सूतक (जननाशौच) के पश्चात् करे। रिक्ता तथा शनि-मंगलवार न होवे। (निर्णय पृ. ५०३)

जन्म में ग्रहण लगा हो- यदि जन्म काल में सूर्य ग्रहण या चंद्रग्रहण होवे तो सूर्य ग्रहण होवे तो उस देवता की चाँदी की मूर्ति बनाकर जातकर्म में ही उसका पूजन करे। राहु के लिए नाग की सीसा की मूर्ति बनावे उसकी भी पूजा करे यह मूर्तियाँ ब्राह्मणों को दान कर देवे। (निर्णय पृ. ५०५)

जन्म होते ही बालक को शंखपुष्पी-ब्राह्मी शतावरी को पीसकर शहद और गोधृत की विषम मात्रा में मिला देवे। इसको स्वर्ण से घिस देवे या कणमात्र स्वर्ण भस्म डाल देवे। लोक परंपरा में घर की कोई वृद्धा माता यह मिश्रण ले जावे तथा हाथ धोकर दाहिने हाथ की अनामिका अंगुली शिशु को चटा देवे।

गोभिल ग्रह्य सूत्र में वर्णन है कि चावल तथा जौं का दाना पीसकर घृत मिश्रित कर स्वर्ण शलाका से बालक को चटा देवे। (गोभिल पृ. ९५) आश्वलायन स्मृति में लिखा कि पिता ही यह स्वर्ण घर्षित मधु घृत को चटावे तथा स्वर्ण से ही उसके मुख में डाले। फिर दोनों कानों पर सोना रखकर पवित्र मंत्रों का उच्चारण करें। शिशु के दोनों कन्धा पिता छूवे मंत्र पढ़े या ब्राह्मण पढे-मंत्र - 'अश्मा भव इन्द्रः श्रेष्ठानि' और 'यस्मै प्रयन्धिः' इन तीन मंत्रों को पढे। पुत्री का जातकर्म भी ऐसे ही करे पर मंत्र न पढ़े। (आ. गृह्यसूत्र ३/३-६) आपस्तंब ग्रह्य सूत्रकार ने लिखा है कि घी और मधु का मिश्रण स्वर्ण से चटावे उसमें दर्भ भी पड़ा हो। तथा कांसे के पात्र में दही और घृत मिलाकर पृष्दाज्य उसे बालक को तीनों व्याहति से चटावे। चौथा ओम शब्द से चटावे। शेष बचे हुए भाग में जल मिश्रित करके गो शाला में डाल देवे। (आपस्तंब ग्रह्य सूत्र पृ. २३६)

वह ब्राह्मी-शंखपुष्पी-शहद और घृत लेकर पिता अनामिका से मुंह में जिव्हा पर लगावे मंत्र-ॐ भूस्त्वयि दधामि ॐ भुवस्तत्वयि दधामि ॐ स्वस्त्वयि दधामि ॐ भूर्भुवः स्वः सर्वं त्वयि दधामि। फिर आयुष्य मंत्रों का पाठ करे। आयुष्य ८ मंत्र 'मंत्र संग्रह' में हैं इनको ३ बार पढ़े, फिर ३ बार पिता 'ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः' इस मंत्र को पढ़े। फिर 'पश्येम शरदः शतं जीवेम' का पाठ करे। पहिले बालक पर कुश का जल भी छिड़के तभी सब संस्कार करे। अब जन्मदात्री माता का मार्जन करे फिर यह मंत्र पढ़े- ॐ इदासी मैत्रावरुणी वीरे वीरमजी जनथाः सा त्वं वीरवती भव यास्मान्वीर वतोऽकरत। इस मंत्र से दाहिना स्तन जल से धोकर बालक को पिलावे। फिर मंत्र पढ़े- ॐ इमꣳ स्तन मूर्जस्वन्तन्धयायां प्रपीनमग्ने सरिरस्य मध्ये। उत्सञ्जुषस्व मधुमन्तमर्वन्त्समुद्रिय सदन माविशस्व। यह मंत्र पढ़कर वामस्तन जल से प्रोक्षण कर बालक को पिलावे 'ॐ स्तनः शशयो' इस मंत्र का पाठ करे। अब नालच्छेद करे। फिर पिता या कोई ब्राह्मण चावल और सरसों को मिलाकर सूतिकागार के बाहर अग्नि में दो

आहुति डाले। मंत्र (संस्कार प्रकाश चतुर्थीलाल कृत) पढ़े। दशदिन तक प्रातः सायं ये दो-दो आहुतियाँ नित्य डाली जाना चाहिये। आपस्तंब में लिखा कि सरसों धान की भूसी बिना मंत्र के ही अग्नि में डाले।

बालक का रोना- यदि बालक अधिक रोता हो संस्कार प्रकाश में लिखे मंत्रों से बालक का मार्जन करे।

षष्ठी पूजन- छटवें दिन रात्रि में षष्ठी देवी का पूजन करे। पुत्रजन्म के प्रथम दिवस-छटवें दिन तथा दशवें दिन सूतक नहीं रहती। दानादि देने लेने में दोष नहीं है। (निर्णय पृ. ५०९)

प्रथमे दिवसे पष्ठे दशमे चैव सर्वदा त्रिस्वेतेषुं न कुर्वीत सूतकं पुत्र जर्न्मान, छटवें दिन रात्रि के प्रथम प्रहर में पिता स्नानादि करके संकल्प करे कि इस बालक की आयु माता सहित संपूर्ण अनिष्ट शांति के लिए विघ्नेश, जन्मदा षष्ठी देवी और जीवन्ती भगवती का पूजन कर रहा हू। फिर अक्षत पुज्जों पर तीनों देवताओं का आवाहन कर पूजन करें। चिरकाल पर्यन्त बालक की भूत-प्रेत-पिशाच-डाकिनी-योगिनी-चतुष्पाद-सर्पादि से बालक की रक्षा करने की प्रार्थना करे। रात्रि में स्त्रियाँ मंगलगान कर जागरण करें। पुरुष शस्त्र लेकर जागते रहे। ब्राह्मण स्वस्त्ययन करें। इस दिन दान लेने में दोष नहीं है। (धर्म सिन्धु पृ. २८२)

पूजा विधि संस्कार प्रकाश या इसी ग्रंथ में देखें।

कहीं कहीं लोकाचार में प्रसूता के हाथ से प्रसव के पूर्व ही कागज पर तेल के छापे लगवा लेते हैं फिर दीवाल पर षष्ठी देवी की पुतली बनाकर वही प्रसूता के हाथ का तेल छापा लगा कागज चिपका देते है। फिर पुतली बनाना संभव न हो तो षष्ठी देवी की चाँदी की प्रतिमा बनाकर घी गुड़ से उसी तेल लगे छापे वाले कागज पर चिपका देते है। पूजा पूर्व सभी देवों की प्राणप्रतिष्ठा होनी चाहिये।

(संस्कार अंक कल्याण पृ. २९४)

ब्रह्म वैवर्त पुराण के प्रकृति खण्ड अध्याय ४३ में षष्ठी देवी की प्रार्थना के मंत्र है। इनका भी पाठ करना चाहिये। देवी भागवत पुराण के नवम स्कन्ध में भी षष्ठी देवी की पूजा तथा महिमा का विस्तृत वर्णन है।

५. नामकरण -

नामकरण भी मुख्य संस्कार है। मनु स्मृति के अनुसार यह संस्कार जन्म के दशवें या बारहवें दिन करना चाहिये। अथवा किसी श्रेष्ठ नक्षत्रादि में करें (मनु. १०/१२)

ग्यारहवें दिन नामकरण संस्कार करने का विधान भी दिया गया। (व्यास स्मृति १/१७, याज्ञवल्क्य स्मृति १/१२) शंख स्मृति में लिखा कि सूतक समाप्ति पर कभी भी नामकरण संस्कार कर सकते है। (शंख स्मृति २१२) 'नम्यते अभिधीयते अर्थोऽनेन इति नाम' जिससे अर्थ का अभिज्ञान हो वही नाम है। नाम अखिल व्यवहार एवं मंगलमय कार्यों का हेतु है। नाम से ही मनुष्य कीर्ति प्राप्त करता है। अतः नामकरण अत्यन्त प्रशस्त है।

· नामाखिलस्य व्यवहार हेतुः शुभावहं कर्मसु भाग्य हेतुः।

नाम्नैव कीर्तिं लभते मनुष्य स्ततः प्रशस्तं खलु नामकर्म॥

(वीर मित्रोदय सं.प्र.)

पारस्कर ग्रह्य सूत्र में दशवें दिन ही नामकरण का कहा है।

'दशम्यामुत्थाय ब्राह्मणान् भोजयित्वा पिता नाम करोति।' (पारस्कर १/१७/१) मदन रत्न में ब्राह्मण को १०वें या १२ वे, १३वें, १६वें दिन क्षत्रिय को, २०वें दिन वैश्य को, शूद्र को २२वें दिन नामकरण संस्कार करना चाहिये। धर्म सिन्धु के पूर्वार्द्ध परिच्छेद में ब्राह्मणों के लिए जन्म से १२वें, क्षत्रिय को १३वें दिन, वैश्य को १६वें या २०वें दिन, शूद्रों के लिए २२वें दिन या मासान्त में नामकरण करना चाहिये। ग्रह्य परिशिष्ट में कहा है कि जन्म के दशरात्रि व्यतीत होने पर सौ रात्रि या संवत्सरान्त पर्यन्त भी नामकरण हो सकता है। (निर्णय पृ ५१५)

आश्वलायन ग्रह्यसूत्रानुसार बालक के दो अक्षर के नाम से प्रतिष्ठा तथा चार अक्षर से नाम से ब्रह्मवर्चस की बृद्धि होती है। 'द्वयक्षरं प्रतिष्ठाकामश्चतुरक्षरं ब्रह्मवर्चसकामो।' (आश्व. गृह्य.)

कुछ आचार्यों ने नक्षत्र नाम के केवल उपनयन संस्कार तक ही उपयुक्त बताया है। जिसे माता पिता ही जाने अन्य नहीं। व्यवहार नाम ही प्रचलन में होना चाहिये।

विवाहे सर्वमांगल्ये यात्रायां ग्रहगोचरे।

जन्म राशि प्रधानत्वं नामराशिं न चिन्तयेत्।

देशे ग्रामे गृहे युद्धे सेवायां व्यवहारके।

नाम राशि प्रधानत्वं जन्म राशि न चिन्तयेत्॥

विवाह में मंगल कार्यों-मंगल यात्रा में ग्रह राशि शनि आदि के आने पर जन्म राशि से ही चिन्तन किया जाता है। प्रचलित नाम से नहीं। व्यवहार में ग्रामादि के निवास में

चलित नाम से ही निर्णय लेना चाहिये।

नाम मुहूर्त- अमावास्या -संक्रांति-भद्रा-ग्रहण-गुरु, शुक्र का अस्त या बाल बृद्धत्व में नामकरण नहीं करना चाहिये। अनुराधा, पुनर्वसु, मघा, तीनों उत्तरा, शतभिषा, स्वाती धनिष्ठा, श्रवण, रोहिणी, अश्विनी, मृगशिरा, रेवती, हस्त और पुष्य नक्षत्र में नामकरण करे। स्थिर लग्न होनी चाहिये। छिद्रतिथि ६-८-१२-१४-९-१५ छोड़कर लग्न से अष्टम की शुद्धि शुक्र-बुध और गुरुवार में मध्यान्ह के पूर्व नामकरण संस्कार करे। (निर्णय ५१५) मुहूर्त प्रकाश में बुध-चंद्र-रविवार-गुरुवार भी प्रशस्त माने गये है। (मुहूर्त प्रकाश २९) नामकरण में मलमास-गुरु, शुक्रास्त, सिंहस्थ गुरु देवशयन-दक्षिणायन का दोष नहीं है।' अत्रमलमास गुरुशुक्रास्तादि दोषो नास्ति।' (धर्म सिंन्धु)

नामकरण विधि- बालक तथा माता-पिता पंचगव्य डालकर स्नान कर, नूतन वस्त्र धारण करें। पूर्वमुख बैठकर संकल्प करें-संकल्प अस्य शिशोः बीजगर्भ समुद्भवै नो निबर्हणायुरभि बृद्धि द्वारा परमेश्वर प्रीत्यर्थ नामकरणं करिष्ये। गणपति-गौरी-पुण्याहवाचन मातृ का पूजा-नांदी श्राद्ध करें। (संस्कार प्रकाश पृ. ३०) तब पत्नी बालक को नूतन वस्त्र में ढाककर लावे पति की दक्षिण दिशा से बालक को उत्तर की ओर सिर करके पिता को देवे। फिर पिता माता की गोद में बालक को देकर अग्नि के संस्कार पूर्वक प्रजापति आदि व्याहृति होम के पश्चात् एक आहुति प्रजापति को दूसरी जिस तिथि में जन्म हुआ उसको तृतीयाहुति जन्म नक्षत्र को देवे। पिता अपने हाथ धोवे फिर उन हाथों में मक्खन लगाकर अग्नि में तपाने और - 'ॐ अग्नेष्ट्वावा तेजसा सूर्यस्य वर्चसां विश्वेषां त्वा देवानां क्रतुनाभिमृशयमि।' यह मंत्र पढ़कर ब्राह्मण से आज्ञा लेकर बालक का स्पर्श करे। (मानव ग्रह्य सूत्र १/१८)

पीछे उस बालक के मुख तथा नासिका के श्वांस पर हाथ लगावे। ब्राह्मणों की आज्ञा लेकर माता की गोद में रखे शिशु के पास जाकर कान में अमुकशर्मासि, यदि क्षत्रिय हो तो अमुकवर्मासि, वैश्य हो तो अमुक गुप्तोऽसि, शूद्र हो तो अमुक दासोसि यह तीन बार कहे। पहिले पुत्र का नाम पिता लेवे फिर माता लेवे, फिर सभी लेने के लिए अधिकृत हैं। (गोभिल आपस्तंब ग्रह्य सूत्र)

ब्राह्मण का नाम मंगल शब्द युक्त, क्षत्रिय का बल युक्त वैश्य का नाम धनयुक्त, शूद्र का नाम सेवासंयुक्त होवे। इन नामों में देवनाम-हरिनाम-महापुरुषों के नाम, पिता पितामाहनादि के तुल्य नाम होना चाहिये। पारसकर सूत्र में कहा कि पुत्र नाम समाक्षरों में कन्यानाम विषमाक्षरों में। नाम का अन्तिम अक्षर दीर्घ एवं कृदन्त हो, तद्धितान्त न होवे। कन्या का नाम सुकोमल-मनोहारी-मंगलकारी दीर्घवर्णान्त होना चाहिये। यथा-रमा-

उमा-यशोदा-मंगला-भद्रा आदि। कन्या का नाम नदी तथा पर्वतों पर न रखें।

यद्यपि देव परक नाम रखने का विधान तो है किन्तु विष्णु हरि-नारायण-राम कृष्णादि न रखे। अपितु हरिदत्त, रामदास, नारायणदत्त, कृष्ण प्रसाद इस प्रकार से इन्द्रदत्त आदि देवताओं के साथ कृपा का संकेत अवश्य रखना चाहिये। (धर्मशास्त्र)

व्यवहार नाम पृथकत: रखने का एक और रहस्य है। यह राशि नाम पर अभिचार तथा तंत्रादि क्रियायें चल जाती है। व्यवहार नाम पर नहीं चलतीं। दूसरा पिता को पुत्र के राशि नाम उच्चारण से 'ज्येष्ठापत्यकलत्र' का नाम नहीं लेना लिखा है उससे श्री नष्ट होती है। इसलिए व्यवहार नाम, प्रचलित नाम भी होना चाहिये।

नामकरण के पश्चात् दश ब्राह्मणों का भोजन तथा दक्षिणा भी करें।

नाम के वर्णों के उच्चारण में बार-बार पुकारने से वातावरण-वायुमंडल तथा वर्णोच्चार से शांति-मंगल-शुभ और साफल्य की वृद्धि होती है अत: नाम मंगलप्रद होने चाहिये। पाश्चात्य अविवेकियों के अन्धानुकरण में आज नाम अर्थहीन तथा वाचिक विकार का रुप धारण कर रहे हैं। नूतन नामों की दौड़ में अर्थहीन अमंगल वर्ण वाले, नपुंसकलिंग-स्त्रीलिंग में बालकों के तथा पुल्लिंग में कन्याओं के नाम रखे जा रहे हैं। साथ ही रिंकी-रिंकू-डबलू-पप्पू-पिन्टू-मिन्टू-जैक-जॉन-डाली तथा पिता से डैडी-मम्मी आदि ये नाम जब तक घर में गूंजते रहेंगे उस घर में सुख-शांति-मन की प्रसन्नता तथा कार्यों की सिद्धि में अवरोध होते ही रहेंगे। एतावता मंगल नामों का चयन करना चाहिये। जिनके उच्चारण से परिवार का वातावरण सुख शांति संपन्न बन सके। ऋषि परम्परा का ध्यान रखना आवश्यक है। अन्यथा पारमार्थिक तथा लौकिक हानि होती है।

दोलारोहण (झूला में सुलाना)

बालक के जन्म के पश्चात् पारिजात में बृहस्पति ने कहा है कि दशवें, बारहवें, सोलहवें या बाईसवें दिन शिशु को झूला में सुलाना चाहिये। हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, रेवती, पुनर्वसु, पुष्य, अश्विनी, तीनों उत्तरा तथा रोहिणी इनमें बालक को हिंडोला (झूला) में बैठाना शुभ है। वैसे बालक को बारहवें दिन तथा कन्या को तेरहवें दिन झूला में बिठावे। (निर्णय सिन्धु पृ. ५१६)

गो दुग्ध पान - बालक को जातकर्म संस्कार के पश्चात् ही माता का दुग्धपान मुहूर्त होता है। गो दुग्ध पिलाने के लिए जन्म के इकतीसवें दिन अन्नप्राशन मुहूर्त के नक्षत्रों में शिशु को गो दुग्ध पिलावे। शिशु को सर्व प्रथम शंख में दूध भरकर उसके मुंह में डाले। पीछे पात्र से दूध पिलाना आरंभ करे। (निर्णय सिन्धु तृतीय पृ. ५१७)

जलपूजनम् -

ज़िस दिन शिशु का जन्म हुआ है उसके १ माह पश्चात् बुध-सोम-गुरुवार (रिक्ता से अन्य तिथि, श्रवण, पुष्य, पुनर्वसु, मृगशिर, हस्त, मूल, अनुराधा इन नक्षत्रों में कूप आदि में जल पूजा करनी चाहिये। इस जल पूजा में गुरु, शुक्र का अस्त, चैत्र, पौष तथा मलमास वर्जित है।)

(धर्म सिन्धु ३ पृ. ३१४)

६. निष्क्रमण संस्कार -

बालक को घर से बाहर निकालने का मुहूर्त कहते है बालक को चंद्रबल श्रेष्ठ हो, जिस दिशा में चंद्र ४/८वाँ न पड़े। उसी दिशा की ओर बालक को प्रथम बार निकाले। ज्योतिर्निबन्ध में कहा है कि बालक को जन्म से तृतीय या चतुर्थ माह में निष्क्रमण करे।

तृतीये वा चतुर्थे वा मासि निष्क्रमणं भवेत्। (निर्णय ३ प.पृ. ५१)

अनुराधा, पुष्य, पुनर्वसु, अश्विनी, रेवती, हस्त, ज्येष्ठा, मृगशिरा तारा तथा चन्द्रमा की अनुकूलता देखकर सोमवार, बुधवार, गुरुवार तथा शुक्रवार इन दिनों में रिक्ता रहित तिथियों में कन्या कुंभ, तुला और सिंह इन लग्नों, षष्टाष्ट स्थानों का विचार करके निष्क्रमण करावे। (निर्णय सि. ३ प.पृ. ५१८)

संकल्प- अस्य कुमारस्य आयुरभि वृद्धि व्यवहार सिद्धि द्वारा परमेश्वर प्रीत्यर्थ गृहान्निष्क्रमणं करिष्ये। गणपति गौरी-मातृका पूजन करके (नांदीश्राद्ध करें या न भी करें धर्मसिन्धु ने कहा है) माता बालक को लाकर पिता को देवे। शंख ध्वनि के साथ बालक को निकाल कर कहे कि-चन्द्रमा-सूर्य-दिशा स्वामी, दिशा तथा आकाश को निक्षेप के लिए इसको देता हूँ ये बालक की निरन्तर रक्षा करें। यह अप्रमत्त हो या प्रमत्त हो दिन हो या रात्रि हो इन्द्रादि देवता इसकी सभी अवस्था तथा सभी काल में रक्षा करे। (निर्णय. ३ प.पृ. ५१९) घर से बाहर निकलकर फिर पिता सूर्य का दर्शन पुत्र को करावे तथा 'ऊँ तच्च्क्षुर्देवहितं' यह सूर्योपस्थान का मंत्र बोले। फिर किसी देवालय तक ले जाकर लौटा कर आवे। तब दश ब्राह्मणों का भोजन करावे दक्षिण देवे।

भूमि पर बिठाने का मुहूर्त -

जन्म काल से पाँचवे महिने में बालक को सभी ग्रहों की श्रेष्ठता तथा विशेषकर मंगल अनुकूल हो। तीनों उत्तरा, मृगशिरा, पुष्य, ज्येष्ठा, श्रवण, हस्त, अश्विनी और अनुराधा ये नक्षत्र बालक को भूमि में बिठाने के लिए उत्तम है।

पूर्व में ब्राह्मण द्वारा वाराह तथा पृथ्वी की पूजा करे- हे वसुधा इस शिशु की सदा

रक्षा कीजिये।

वाराहं पूजयेद्देवं पृथिवीं च तथा द्विजः।

रक्षैनं वसुधे देवि सदा सर्वगतं शुभे॥

हे हरिप्रिये इस बालक की संपूर्ण आयु प्रमाण की रक्षा करो। इस चिरायु के जो भी शत्रु या धन-जीवन के विरोधी हो उनको शीघ्र शमन करो।

आयुः प्रमाणं सकलं निक्षिपस्व हरिप्रिये।

अचिरादायु षस्त्वस्य ये केचित् परिपंथिनः॥

जीवितारोग्य वित्तेषु निर्द हेस्वाचिरेण तान्।

हे पृथ्वी माता तुम श्रेष्ठ अशेष प्राणियों की काम धेनु रूप माता हो। अजर तथा अप्रमेय प्राणियों की प्रतिष्ठा अविनाशी हो हे मातः इस बालक की रक्षा करो तथा ब्रह्मा भी इस बात की अनुमति दें।

वरेण्या शेष भूतानां माता त्वमसि कामधुक्।

अजरा चाप्रमेया च सर्व भूत नमस्कृता॥

चराचराणां भूतानां प्रतिष्ठानाव्यया ह्यसि।

कुमारं पाहि मातस्त्वं ब्रह्मा तदनु मन्यताम्॥

(निर्णय सि. ३ प.पृ. ५१९)

७. अन्नप्राशन संस्कार -

प्रथम बार बालक को अन्न प्राशन कराने के लिए शास्त्र बिधिना छटवें मास या दाँत निकलने पर करावे। आचार्यों ने सम मासों का निर्णय लिया। सूर्य संक्रांति से ६-८-१० या १२ वें मास में यह संस्कार करें। कन्या का अन्न प्राशन ५-७-९ या ११वें मास में यह संस्कार करें।

षष्ठे वाष्टमेवामासि पुंसां स्त्रीण्मं तु पंचमे-सप्तमे।

मासि वा कार्यं नवान्नप्राशनं शुभम्॥

(निर्णय पृ ५२०)

रिक्ता तिथि छोड़कर प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी, द्वादशी, अष्टमी और अमावास्या छोड़कर अन्य तिथियाँ इस कार्य के लिए शुभ है। शुक्रवार, गुरुवार, बुधवार तथा सोमवार को उत्तम माना गया है। पुनर्वस, पुष्य, घनिष्ठा, रोहिणी, श्रवण, शतभिषा तीनों

उत्तरा, रेवती यह नक्षत्र ग्रहण करना चाहिये। षष्ठी-अष्टमी-नवमी-चतुर्दशी-द्वादशी-चतुर्दशी इन तिथियों को छोड़कर शेष तिथियों में शिशु का अन्नप्राशन श्रीधर ने शुभ माना है बालक के अन्नप्राशन में यज्ञोपवीत में और राज्यअभिषेक में जन्म नक्षत्र शुभ है तथा विवाह-सीमन्त तथा यात्रा आदि मंगल कार्यों में अशुभ है। (निर्णय सि. ३ प.पृ. ५२०) किन्तु धर्म सिन्धु में जन्म नक्षत्र ग्रहण नहीं करने का भी कहा है। भद्रा, वैधृति, व्यतीपात-गण्ड-अतिगण्ड-शूल और परिध ये वर्जित है।

विधि - माता-पिता तथा बालक मंगल स्नान कर नूतन वस्त्र धारण करें।

संकल्प - अस्य शिशोमीतृ गर्भामंगल प्राशन शुद्धयर्थं अन्नाद्य ब्रह्मवर्चस तेज इन्द्रियायुर्बल लक्षण फल सिद्धि बीज गर्भ समुद्भवे नो निवर्हण द्वारा श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं अन्नप्राशनाख्यं कर्म करिष्यें। गणेश-गौरी-पुण्याहवाचन-मातृका पूजा-नांदी श्राद्ध करे। कुछ विद्वानों का कथन है कि विष्णु-शिव-सोम-सूर्य-दिक्पाल-भूमि-दिशा और ब्राह्मण का पूजा करे। (निर्णय सि. ३ प.पृ. ५२०) धर्म सि.पृ. ३१५)

पुनः अग्नि स्थापन कर कुश कण्डिका पूर्वक अग्नि में प्रजापति इन्द्र-अग्नि-सोम को आहुति देवे अन्य आहुति (संस्कार प्रकाश की अन्नप्राशन विधि) देवे अंत में नवाहुति देकर संस्रवप्राशन, पूर्ण पात्र दान करे।

फिर माता की गोद में बैठे हुए बालक को कांसे या स्वर्ण का पात्र में रखा हुआ दही-मधु-गोघृत मिली हुई खीर सोने में रखकर या सोनेकी अंगूठी पहिनकर मंत्र 'ॐ अन्नपते अन्नस्य' मंत्र को पढ़ता हुआ खिलावे। (धर्म सि. ३ प.पृ. ३१५) निर्णय सिन्धु कार ने कहा है कि मधु-घृत और दही मिश्रित करके खिलावे या खीर खिलावे। (निर्णय ३ प.पृ. ५२०) आपस्तंब गृह्यसूत्र में कहा कि 'पुण्याहं, स्वस्ति, ऋद्धिम्, औषधयस्सन्तु' इन चार मंत्रों से चार बार खिलावे। तथा पुत्री को बिना मंत्र के ही प्राशन करावे। (सूत्र १६/१) आश्वलायन स्मृति में कहा कि वह स्वर्ण जिससे बालक को चटाया है वह ब्राह्मण को दे देना चाहिये। (८/४) फिर पवित्री युक्त हाथ से जल पिलावे।

जीविका परीक्षा - नि. सिन्धु-धर्म सि. तथा सूत्रों में भी लिखा कि बालक की जीविका का क्षेत्र परीक्षा करने के लिए अन्नप्राशन के पश्चात् उसके सामने ग्रंथ-शस्त्र-तराजू-बर्तन-शिल्प-वस्त्र-आभूषण-लेखनी और माला आदि रख देवे। बालक सर्वप्रथम जिस वस्तु को स्पर्श करे समझो वही उसके भविष्य जीवन की जीविका या उद्देश्य होगा।

तत्पश्चात् १० ब्राह्मणों को भोजन कराकर दक्षिणा देवे।

प्रथमं यत्स्पर्शेद् बालस्ततो भाण्डं स्वयं तदा।
जीविका तस्य बालस्य तेनैव तु भविष्यति॥ (माधवीय)

८. अथ कर्ण वेध संस्कार -

कर्ण वेध संस्कार की अत्यन्त अपरिहार्य आवश्यकता है। जिनका कर्णवेध नहीं होता शास्त्र में लिखा है कि उनको मंत्र सिद्धि, साधना सिद्धि तथा कार्य सिद्धि नहीं होती। वर्तमान की कुप्रथा से तो स्त्रियों ने भी कर्णच्छेद समाप्त कर दिया है यह अत्यन्त हानि कर है। ऋषियों के वैदिक नियमों के पीछे महनीय गंभीर रहस्य निहित हैं। अतः कर्णवेध का होना नितान्त आवश्यक है।

कर्णवेध जन्म से दशमें-बारहवें-सोलहवें दिन अथवा छटे, आठवें, दशमें, बारहवें मास का प्रथम या तीसरे वर्ष में कर्णवेध करे। कन्या या पुत्र सभी का कर्णवेध विषम वर्ष में ही करना चाहिये।

पौष-चैत्र-फाल्गुन के शुक्लपक्ष कर्णवेध के लिए शुभ हैं। जन्ममास में कभी कर्णवेध नहीं करना चाहिये। भद्रा तथा विष्णु शयन ये भी निषिद्ध हैं। मीन का सूर्य हो तो चैत्र और धनु का सूर्य हो तो पौष मास निषिद्ध है। तिथियों में २, १०, ६, ७, १३, १२, ५, ३ ये तिथियाँ ग्रहण करनी चाहिये। चंद्र-बुध-गुरु और शुक्रवार तथा पुष्य, पुनर्वसु तीनों उत्तरा-हस्त, चित्रा, अश्विनी, श्रवण, रेवती और घनिष्ठा ये नक्षत्र शुभ है। जिस दिन २ नक्षत्र और २ तिथियाँ हो उस दिन कर्णवेध न करे।

(निर्णय सि. तृतीय प.पृ. ५१७)

संकल्प - अस्य कुमारस्य आयुरभिवृद्धिसिद्धये कर्णवेधं करिष्ये। गणेश गौरी पूजा, कुलदेवता, विष्णु, रुद्र, ब्रह्मा, सूर्य चंद्र, दिक्पाल, अश्विनी कुमार, सरस्वती, गौ और ब्राह्मण की पूजा करके बालक को पूर्व मुख बिठाकर उसके हाथ में कुछ मिष्ठान्न देकर बालक का पहिले दाहिना कान, फिर वाम कर्ण, कन्या का पहिले वाम फिर दाहिना कर्णच्छेद करे। बालक के दाहिने कर्ण का छेदन करे। दाहिने कान के छेदन का मंत्र 'ॐ भद्रं कर्णेभिः' फिर वाम कर्ण को 'ॐ वक्षन्ती वेदागनी गति' बालक के आठ अंगुल लंबी चाँदी की शलाका से ब्राह्मण बालक का कर्ण वेध, इतनी ही लंबी स्वर्ण शलाका से क्षत्रिय का, चाँदी की शलाका से वैश्य का और लौह शलाका से शूद्र का कर्ण वेध संस्कार करे। छिद्र अधिक बड़ा हो जावे तो उस व्यक्ति के किये हुए सभी पुण्यों का नाश हो जाता है। परिवार की सुवासिनी सौभाग्यवती स्त्रियाँ फिर बालक-बालिका के कर्ण में स्वर्ण या चाँदी की बाली पहिना देवें। फिर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन-दक्षिणा

तथा मिष्ठान्न वितरण करावे।

(धर्म सिन्धु तृतीय परिच्छदे पृ. ३१६)

कर्णवेधं प्रशंसन्ति पुष्टयायुः श्री विवृद्धये॥

(ज्योतिर्निबन्धे गर्गः)

कटि सूत्र कथनम् -

ब्रह्मपुराण का मत है कि वर्ष के अन्त में किसी श्रेष्ठ मुहूर्त में ब्राह्मणों को दान देकर बालक की कटि में स्वर्ण-चाँदी या सूत्र को ही धारण कर देवे। इस दिन शिव के लिए हवन तथा पितृ तृप्ति के लिए तर्पण करे। पितृयज्ञस्तु तर्पणम्॥

(निर्णय ३ प. पृ. ५२२)

९. मुण्डन (चौल) संस्कार

अभ्युदय चाहने वाले व्यक्ति मात्र को जन्म के पश्चात् मुण्डन संस्कार का होना परमावश्यक है। शूद्र का भी अमंत्रक मुण्डन संस्कार आवश्यक है। कन्या का मुण्डन भी शास्त्र में अत्यावश्यक बताया गया है। कुछ कल्पना जीवियों का कथन है कि बालिका के मुण्डन की कोई आवश्यकता नहीं होती। पर यह नितान्त अज्ञान जन्य धारण है। मुण्डनम् आवश्यकम्। गर्भस्थ संस्कारत्रय तथा मुण्डन संस्कार से गर्भवास जन्य अपवित्रता दूर होती है।

गार्भैर्होमैर्जात कर्म चौल मौजी निवन्धनैः।

बैजिकं गार्भिकं चैनो द्विजानामपमृज्यते॥

शुक्ल यजुर्वेद में कहा कि शिशु की दीर्घायु के लिए अन्नग्रहण की सामर्थ्य के लिए उत्पादन शक्त्यर्थ-बल-वीर्य-तेज बुद्धि के लिए बालक का मुण्डन करता हूँ।

निवर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय॥ (शु. यजुर्वेद)

चौलकर्म से गर्भ के केश निकाले जाते है गर्भावस्था के केशों के बने रहने से व्यक्ति के अंदर सत्वगुण की वृद्धि नहीं होती। वह तमोगुणी-हिंसक-क्रूर-पापी-कृतघ्नी-आचारहीन-अश्रद्धावान्-अधार्मिक होता है। जिन पंथों में यह संस्कारों की पावन परंपरा नहीं है उनको ध्यान से देखें तो उनमें उपरोक्त संपूर्ण दुर्गुण बने रहते है। अतः मुण्डन का होना अति आवश्यक है। वर्तमान में संस्कारहीनता का परिणाम ही संपूर्ण विश्व भोग रहा है। आतंकी प्रवृत्ति में यही संस्कार का न होना है।

मुण्डन काल - प्रयोग पारिजात में वर्णन है कि जन्म से तृतीय वर्ष में मुण्डन होना

चाहिये। पर प्रथम-द्वितीय-तृतीय और पाँचवा वर्ष भी मुण्डन के लिए स्वीकार्य हैं। समय का विकल्प कुल धर्म से भी मान्य किया जा सकता है। मुण्डन में शुक्र का होना आवश्यक है। कन्या का मुण्डन भी इसी प्रकार समझें।

तृतीयोब्दे शिशोगर्भजन्मतो वा विशेषत:।

पञ्चमे सप्तमे वापि स्त्रिया: पुंसोऽपि वा समम्॥

तीन वर्ष के पश्चात् का मुण्डन श्रेष्ठ नहीं माना जाता। उत्तरायण सूर्य शुक्ल पक्ष श्रेष्ठ होता है। गुरु सिंह का होना वर्जित है। तिथियों में २, ३, ५, ७, ११, १० और १३ ये तिथियाँ ग्राह्य है। सूर्य-मंगल-शनि को और मना है।

हस्त-अश्विनी-श्रवण-रेवती-धनिष्ठा-पुष्य पुनर्वसु मृगशिर और चित्रा ये ९ नक्षत्र नूतन मुण्डन में शुभ माने जाते हैं। तीनों उत्तरा, स्वाती, रोहिणी और शतभिषा ये नक्षत्र मध्यम हैं। शेष सभी अग्राहय हैं। यदि माँ गर्भवती हो तो ऐसे अवसर पर बालक-बालिका का मुण्डन न करे। यदि करे तो बालक का अनिष्ट होता है। रोगी-ज्वरग्रस्त बालक का मुण्डन न करावें। बालक की माँ उन दिनों रजस्वला न होवे। सहोदर भाई बहिन का मुण्डन एक साथ न करें।

शिखा रखना मुण्डन के समय आवश्यक है। सत् शूद्र भी शिखा रख सकते हैं। अस्पृश्य शूद्र को शिखा नहीं रखने का नियम है। स्त्री (बालिका) के मुण्डन में शिखा की आवश्यकता नहीं है। (निर्णय ३ प.पृ. ५२८)

* तीन पीढ़ी तक यदि विवाह या यज्ञोपवीत संस्कार हुआ हो तो फिर मुण्डन न किया जावे।

* चूड़ाकर्म में एक चोटी रखना आवश्यक है फिर जिसके जितने प्रवर है उतनी चोटी भी रखने का विधान है।

* कन्या के मुण्डन में मंत्रोच्चार आदि की आवश्यकता नहीं है।

* मुण्डन संस्कार घर में हो तो तीन माह तक घर में पिण्डदान तथा तिल तर्पण न करे। पर महालय श्राद्ध (आश्विन का) तथा माता पिता की अवसान तिथि का श्राद्ध और गया श्राद्ध किया जा सकता है। (धर्म सिन्धु 3 प. पृ. ३२०)

विधि - चूड़ाकर्म करने हेतु माता-पिता-बालक का स्नान करा लेवे। फिर जहाँ चूड़ा कर्म करना है उस स्थान को देशी गाय के गोबर से लीपे। पूर्व भाग में यथा विधि अग्नि स्थापन करे। २१ कुशा, गर्म जल से भरा कांसे का पात्र, गूलर के काष्ठ का छुरा दर्पण, लोहे का छुरा सहित नापित (नाई) ये चार वस्तुएँ दक्षिण दिशा में रखे। साँड का

गोबर-खिचड़ी-भात ये उत्तर दिशा में रखे। पूर्व दिशा में एक पात्र में धान्य, जौ दूसरे पात्र में तिल तथा उड़द रखे। (खिचड़ी-धान्य आदि ये सभी बाद में नाई को दिये जायेंगे।) (गोभिल २/९/१-७)

चौल विधि -

संकल्प-अस्य कुमारस्य बीजगर्भ समुद्भवैनोनिबर्हणेन बलायुर्वचोर्भि बुद्धि व्यवहार सिद्धि द्वारा परमेश्वर प्रीत्यर्थ चौलकर्म करिष्ये। गणपति-गौरी-मातृका-पुण्याहवाचन नांदीश्राद्ध अग्नि स्थापन कुश कण्डिका कर व्याहृति होम- नवाहुति पूर्णपात्र दान भस्म धारण करने के पश्चात् नापित की ओर पिता देखे तथा मन ही मन सूर्य भगवान् का ध्यान करे 'आयगमात्' मंत्र पढ़े। फिर गर्म जल से भरे हुए काँस्य पात्र को देखकर मन ही मन वायु देवता का ध्यान करे 'उष्णेनवाय' इस मंत्र को स्वयं या आचार्य बोले। फिर पिता दाहिने हाथ से बालक के दाहिनी ओर के बालों को गीला करे। 'विष्णोदंष्ट्रोऽसि' मंत्र से गूलर का छुरा देखे दर्पण देखे। फिर ७ कुशा लेकर उनकी जड़ों को बालक के दाहिनी ओर के बालों में बाँधे जिससे कुश की नोक आगे की ओर रहे। फिर गूलर का छुरा लेकर उसको बालों के ऊपर चलावें किन्तु इससे बाल नहीं कट सकते। अतः उस छुरा को चलाकर फिर नापित लोहे का छुरा लेवे। आचार्य मंत्र पाठ करे। दाहिनी ओर के बाल जिसमें कुछ बंधे हैं उनको काटे। काटकर साँड के गोबर पर रखता जावे। जब शिखा छोड़कर मुण्डन हो जावे 'त्र्यायुषं' मंत्र बोलता हुआ पिता बालक के सिर को अपने दोनों हाथों से पकड़े। बालक के सिर पर मक्खन हल्दी मिलाकर रगड़ देवे। फिर वह गोबर में चिपके हुये बाल ले जाकर वन में भूमि में गाड़ देवे अथवा किसी सघन वन में फेंक देवे। ब्राह्मण को गो दान कर दक्षिणा देवे। (गोभिल ग्रह्य सूर्य २/१०/१-५)

संपूर्ण विधि के मंत्रों को (आगे संस्कार विधि) में देखें। 'वैदिक हिन्दू संस्कृति दीपक' के अनुसार पूजा का क्रम पूर्ण करने के पश्चात् बालक के बालों की तीन चोटी की तरह विभाजन कर दें। फिर दक्षिण भागस्थ चोटी को शाही (सेई) के काँटे से बालक के बालों को खोलकर एक-एक लट में ३-३ कुश पत्र से जोड़ देवे। फिर आचार्य मंत्र पढ़े तथा नापित बाल काटे इन बालों को गोबर के पिण्ड पर रखें फिर दक्षिण दिशा की दोनों लटें काट दे। फिर पश्चिम दिशा के बालों की ३ लटें बनावें पूर्ववत् मंत्र से जल से क्षालित करे, शाही के काँटे से हीन भाग बनावे फिर तीनों लड़ों में तीन कुश पत्र बाँधे। आचार्य के मंत्र पढ़ने पर नाई इन तीनों भागों को पश्चिम दिशा बालों को काट दे। अब उत्तर की ओर की तीनों लटों में तीन कुशपत्र बाँधकर मंत्र पढ़ता हुआ इनको भी काटे गोबर के पिण्ड पर रख देवे। फिर नाई बालक के सिर पर दो बार

छुरा घुमाकर सफाई करे। उसका भी मंत्र पढ़े। इसके पश्चात् शिखा सुरक्षित कर नाई सिर का पूर्ण मुण्डन कर दें।

('तुलसी पीठ सौरभ' पृ. ९ वर्ष २०१२ अंक १० स्वामीवर्य श्रीराम भद्राचार्य तुलसी पीठाधीश्वर चित्रकूट)

कन्या का मुण्डन भी इसी पद्धति से होगा, किन्तु उसमें मंत्रों का प्रयोग नहीं होगा।

लिप्यारंभ संस्कार

यह संस्कार पाँचवे वर्ष में उत्तरायण सूर्य शुभ मुहूर्त में संपन्न करे। इसके लिए गुरुपूर्णिमा भी सर्वश्रेष्ठ मान्य है। पिता बालक के साथ मंगल स्नान करे तथा संकल्प-अमुकोऽहं मक बालकस्य लिप्यारंभ संस्कारं करिष्ये। इसके पश्चात् विद्या के मुख्य देवता गणपति-सरस्वती-कुलदेवता-गुरु-लक्ष्मी-नारायण-यजुर्वेद-कात्यायन सूत्र का षोडशोपचार पूजन करे। फिर अक्षरारंभ कराने वाले अध्यापक की पूजा करके निम्नलिखित मंत्र पढ़े ॐ पावकान: सरस्वती वात्रेभिर्वाजिनीवती। यज्ञं वष्टुधिया वसु:॥ यह मंत्र आचार्य पट्टी पर लिखे फिर बालक के हाथ से 'राम' यह ३ बार लिखवाये तथा ३ बार पढ़वाये। अनन्तर ब्राह्मण भोजनादि कराने के पश्चात् दक्षिणा दे।

(तुलसी पीठ सौरभ मार्च २०१२ पृ. १०)

१०. उपनयन संस्कार-

'यच्छिखया बिनाकर्म बिना यज्ञोपवीतिकम्'

बिना शिखा तथा बिना यज्ञोपवीत के कोई भी वैदिक कर्म करने का अधिकार नहीं है। जिन ब्राह्मणों को ब्रह्मवर्चस की कामना है उनका उपनयन पाँच वर्ष की आयु में, बलाकांक्षी क्षत्रिय को ६ वर्ष की आयु में यज्ञोपवीत तथा धनाकांक्षी वैश्य को आठ वर्ष की आयु में उपनयन संस्कार करना चाहिये।

ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पंचमे।

राज्ञो बलार्थिन: षष्ठे वैश्यस्यार्थार्थिनोऽष्टमे॥ (मनु.)

आपस्तंब ने ब्राह्मण बालक को आठवें वर्ष में माना है संभवत: यह गर्भ से माना गया है। आपस्तंब कहते है कि ब्रह्मवर्चस के लिए सातवां वर्ष, आयुस्कामना के लिए आठवां वर्ष तेजस्कामना के लिए नवमें वर्ष, अन्नाद्य कामना के लिए दशवां वर्ष, इन्द्रिय कामना के लिए ग्यारहवां वर्ष, पशुकामना के लिए बारहवें वर्ष में उपनयन करे। (निर्णय ३ प.पृ. ५४२) आश्वलायन स्मृति के उपनयन प्रकरण में ब्राह्मण को उपनयन ८वें वर्ष तक

हो जाना चाहिये यह सभी आचार्यों का मत है अथवा सातवें वर्ष पर्यंत।

ब्राह्मणास्याष्टमे वर्षे विहितं चोपनायनम्।

सप्तमे चाथ वा कुर्यात्सर्वाचार्यमतं भवेत्॥

(आश्वला. उपनयन प्र. १)

शंख स्मृति में भी कहा है कि ब्राह्मण बालक का संस्कार ८ वर्ष की आयु तक हो जाना चाहिये।

गर्भाष्टमेऽब्दे कर्तव्यं ब्राह्मणस्योपनायनम्। (शंख २१५)

विष्णु स्मृति में अष्टम वर्ष कहा है-यज्ञोपवीत के बिना गायत्री का अधिकार कभी नहीं हो सकता।

गर्भाष्टमे तथा कर्म ब्राह्मणस्योपनायनम्।

द्विजत्वे त्वथ संप्राप्ते सावित्र्यामधिकारभाक्॥

(विष्णु. १३)

गोभिलादि समस्त सूत्रों तथा स्मृतियों से सिद्ध होता है कि अष्टमें वर्षे ब्राह्मण मुपनयेत् (खादिर गृह्य २/४१२)

गोभिल ने लिखा 'गर्भाष्टमेषु ब्राह्मणमुपनयेत्'

गर्भैकादशेषु क्षत्रियम्-गर्भ द्वादशेषु वैश्यम्। (गोभिल २/१०/१-४)

यदि समयानुसार त्रैवर्णिकों का यज्ञोपवीत नहीं होता तो उनको 'व्रात्य' कहा जाता है तब प्रायश्चित करके यज्ञोपवीत करना चाहिये। ब्राह्मण १६ वर्ष, क्षत्रिय २२ वर्ष, वैश्य २४ वर्ष के पश्चात् गायत्री के उपदेश के योग्य नहीं रहते। ऐसे व्यक्तियों को वेदाध्ययन न करावे, न यज्ञ करावें, न ही इनका विवाह करें।

नैनानुपनयेयुर्नाध्यापयेयुर्न याजयेयु र्नैभिर्विवहेयुः।

(गोभिल गृ. २/१०/१-६)

निर्णय सिन्धु ने कहा है कि यदि समयानुसार यज्ञोपवीत नहीं हुआ तो वे तीनों वर्ण शूद्र हो जाते है। उनका किसी भी धर्म कार्य में अधिकार नहीं होता है।

अकृतोपनयाः सर्वे वृषला एव ते स्मृताः। (निर्णय ३ प.पृ. ५४३)

उपरोक्त आधार पर सिद्ध होता है कि समयानुसार यज्ञोपवीत करावें। अन्यथा प्रायश्चित करके भी करावें। 'वैदिक हिन्दू संस्कृति दीपक' में तुलसी पीठाधीश्वर

रामानंदाचार्य जी ने लिखा है कि तीन गोदान करके प्रायश्चित करे फिर यज्ञोपवीत करावे। (तुलसी पीठ सौरभ २०१२ अंक १० पृ. ९)

जिनका यज्ञोपवीत नहीं हुआ वे १०-१२ वर्ष या ८ वर्ष तक के बालकों को भोजनादि का नियम नहीं होता। मल मूत्र त्याग के पश्चात् आचमनादि का भी नियम नहीं होता। बासा अन्न या प्रमाद से लशुन-प्याज खाने का दोष नहीं है। जूठा भोजन-असत्य भाषण का भी दोष नहीं है। पर मांस-मदिरा तथा रजस्वला स्पर्श का दोष लग जाएगा। यदि शिशु को रजस्वला छू जावे तो मार्जन जल से करे। यदि ५-७ वर्ष का हो गया है तो रजस्वला के स्पर्श हो जाने पर स्नान करावे। अन्न प्राशन के पूर्व शिशु है इसके पश्चात् मुण्डन तक बालक संज्ञा है। मुण्डन से यज्ञोपवीत तक कुमार संज्ञा है। यदि अनुपनीत में बिना जनेऊ के माता-पिता की मृत्यु हो जावे तो अन्त्येष्टि कर्म श्राद्धादि कर सकता है। बिना जनेऊ वाला भी अन्त्येष्टि के मंत्र बोल सकता है। सव्य अपसव्य होने में कंधे पर रखा हुआ वस्त्र ही यज्ञोपवीत का काम करेगा। शिशु तथा बालकों को अनुचित कर्मों से बचावे। जो बालकों को मिष्ठान्न-खिलौना तथा अपने से पूर्व भोजन करा देता है। ऐसा व्यक्ति स्वर्ग का अधिकारी हो जाता है। अत: कहीं जावे तो बालकों को कुछ लेकर अवश्य आना चाहिये, इससे उनकी प्रसन्नता बनी रहती है। तथा पिता-माता-भ्राता को गोदान का फल प्राप्त होता है।

(धर्म सिन्धु ३ प.पृ. ३२२)

उपनयन कराने के अधिकारी –

उपनयन कोई अधिकारी व्यक्ति को, आचार्य को कराना चाहिये। फिर इस कर्म का अधिकार पिता को है जो पिता न करावे तो पितामह करावें अथवा चाचा या ताऊ या सहोदर या सपिण्ड या सगोत्री या मामा किन्तु ये सभी बालक की अवस्था से बड़े होने चाहिये। जो अवस्था में छोटे हैं उनका कराया यज्ञोपवीत निषिद्ध होता है। यदि ये न होवे तो कोई श्रोत्रिय, वेदपाठी करावे। जो यज्ञोपवीत कराने वाला है वह और जिसका हो रहा है वे दोनों तीन कृच्छ्र व्रत करें। उपनयन कराने वाले को १२००० गायत्री मंत्र का जप अधिकार सिद्धि के लिये करना चाहिये। (धर्म सिन्धु ३ प. पृ. ३२३) पिता ही पुत्र का उपनयन करे। अभाव में पितामह करे उनके भी अभाव में सहोदर ज्येष्ठ करा सकते हैं। यह ब्राह्मणों के लिए नियम है। क्षत्रिय-वैश्य को तो ब्राह्मण ही करावें।

प्रायश्चित-

यदि ब्राह्मण १६ वर्ष का हो गया तो शिखा सहित मुण्डन करावे। २१ दिन तक जौ

का सत्तू खावे। व्रत के अन्त में सात ब्राह्मणों को भोजन करावें। फिर सोलह वर्ष से पीछे सत्रह वर्ष में तीन कृच्छ्र करावे। (रात्रि में सत्तू न खावे)

(निर्णय सि. ३ प.पृ. ५५०)

दीक्षा- मंत्र दीक्षा अपने से छोटे आयु के व्यक्ति से मंत्र नहीं लेवे। ब्राह्मण को ब्राह्मण से, क्षत्रिय को ब्राह्मण या क्षत्रिय से वैश्य को ब्राह्मण या क्षत्रिय से मंत्र लेना चाहिये। किन्तु यज्ञोपवीत ब्राह्मण ही कराएगा। ब्राह्मण को क्षत्रिय या वैश्य जाति के संत महात्मा से भी मंत्र ग्रहण नहीं करना चाहिये। फिर शूद्र तथा स्त्री से तो कभी भी मंत्र नहीं लेना चाहिये। न जातु मंत्रदा नारी न शूद्रान्तरो भवेत्॥ (व्यास पीठ) व्यास पीठ की आचार संहिता में इस विषय पर विस्तार से चर्चा की गई है। आज कल दीक्षा व्यापार या पैतृकता के आधार पर हो रहा है।

उपनयन मुहूर्त-

हेमाद्रि में वर्णित है कि माघ माह से पाँच माह तक उपनयन श्रेष्ठ होता है। यही बात गर्ग ने कही है। मैत्रेय ने भी उत्तरायण सूर्य ही दीक्षा को श्रेष्ठ कहा है। मैत्रेय ने ब्राह्मणों को वसन्त ऋतु, क्षत्रियों को ग्रीष्म ऋतु और शरद ऋतु वैश्यों को श्रेष्ठ कहा है। जन्म नक्षत्र में, जन्म मास, जन्मवाला दिन तथा प्रथम पुत्र को ज्येष्ठ मास वर्जित है। बड़ी कन्या को भी ज्येष्ठ में विवाहादि मना है। भृगु ने जन्म मास के उत्तरार्द्ध को स्वीकार किया है। जन्म मास के पक्ष को ग्रहण न करे। दीक्षा में छटा-आठवां-बारहवां गुरु भी निषेध है। यदि आठवें वर्ष में गुरु शुद्धि न हो तो चैत्रमास में उपनयन करे। आठवां गुरु, सिंह या मकर का गुरु भी चैत्रमास में होने से शुभ है। (निर्णय ३ प.पृ. ५४६)

तिथि विचार :- तृतीया-पञ्चमी-षष्ठी-द्वितीया और सप्तमी ये दोनों पक्ष में ठीक हैं। कृष्णपक्ष की प्रतिपदा भी ग्रहण की जा सकती है। किन्तु अमावास्या के पश्चात की द्वितीया ग्राह्य नहीं है। प्रतिपदा में चन्द्रबल अतिश्रेष्ठ होना चाहिये। फिर भी कृष्णपक्ष का पूर्ण त्याग कर शुक्लपक्ष को ही ग्रहण करने का ऋषियों का विशेष मत सर्वत्र है। मिथुन के सूर्य आने पर ज्येष्ठ मास का दोष नहीं होता। अनध्याय में भी उपनयन निषेध है। व्यास स्मृति में कहा है कि चैत्र वैशाख की तृतीया, माघ शुक्ल सप्तमी तथा फाल्गुन कृष्ण २ अधिक श्रेष्ठ हैं। अक्षय तृतीया को भी श्रेष्ठ माना है। (निर्णय ३ प.पृ. ५४६)

* सूर्य चंद्र ग्रहण में, भूकम्प में दश दिन तक यज्ञोपवीत में त्यागकर देना चाहिये।

दिवस-बुधवार, गुरुवार और शुक्रवार उपनयन के लिए अति श्रेष्ठ हैं। सोमवार, रविवार मध्यम है। सामवेदी मंगलवार में भी कर सकते है।

नक्षत्र- जयोतिर्निबन्ध में हस्त, रेवती, पुष्य, मृगशिरा पुनर्वसु, तीनों उत्तरा, श्रवण, घनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी अनुराधा तथा रोहिणी ये नक्षत्र उपनयन में शुभ है। ऋग्वेदियों के लिए तीनों पूर्वा, हस्त-चित्रा-स्वाती, अश्लेषा, श्रवण तथा मूल शुभ माने गये है। यजुर्वेदियों को रेवती, अनुराधा, हस्त, पुनर्वसु, पुष्य, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती, तीनों उत्तरा और रोहिणी शुभ हैं। सामवेदियों को श्रवण आर्द्रा, हस्त, धनिष्ठा पुष्य, तीनों उत्तरा तथा आश्विनी शुभ है। अथर्ववेदियों को घनिष्ठा पुनर्वसु, अनुराधा, हस्त, मृगशिरा और रेवती शुभ है।

राजमार्तण्ड ने पुनर्वसु नक्षत्र ब्राह्मण के लिए यज्ञोपवीत में अति निषेध माना है।

(निर्णय ३ प. पृ. ५५२)

ग्रहस्थिति- शुभग्रह ६-८-१२ में शुभ नहीं हैं। पापग्रह ३-६-११ में शुभ। चंद्र-सूर्य लग्नस्थ हो तो श्रेष्ठ होते है। आठवां स्थान ग्रहशूण्य होना चाहिये। लग्नेश और चंद्र यह छटवें घर में अशुभ है। शुक्र १२वें घर में आठवें-बारहवें घर का चंद्र अशुभ है। कर्क के नवांश का सर्वथा त्याग करे। (धर्म सिन्धु ३ प.पृ. ३३२)

लुप्त संस्कार प्रायश्चित्त -

जिनका गर्भाधान-पुंसवन-सीमन्त-जातकर्म-निष्क्रमण-कर्णवेध-मुंडनादि संस्कार संपन्न नहीं हुए उनको यज्ञोपवीत के पूर्व लुप्त संस्कार प्रायश्चित्त करना चाहिये। आचमन-मार्जनादि करे तब संकल्प करे।

संकल्प - अस्य कुमारस्य गर्भाधान-पुंसवन-सीमंतोन्नयन जातकर्म-नामकर्म-सूर्यावलोकन - निष्क्रमणोपवेशन-अन्नप्राशन-मुण्डन संस्काराणां कालातिपत्तिजनित प्रत्यवाय परिहार द्वारा श्री परमेश्वर प्रीत्यर्थं अनादिष्ट प्रायश्चित्त होम पूर्वक गोदानं यथाशक्त्या करिष्ये।

तब हाथ परिमित वेदी बनाकर अग्नि स्थापन-आवाहन-पूजन-ब्रह्मा स्थापन-कुश कंडिका करके व्याहृति होम-दश वार करे। नवाहुति करे पूर्णपात्र दान करे। फिर गोदान या निष्क्रय गोदान का संकल्प करे।

उपनयन के पूर्व उपवास करे कुश द्वारा मंत्र पूर्वक पंचगव्य निर्माण कर उसका पान करे जितने वर्ष निकल गये बिना संस्कार के उतने वर्ष के प्रत्येक वर्ष की संख्या से १-१ गोदान करे। या निष्क्रय द्रव्य दान करे फिर ब्राह्मणों द्वारा १० सहस्र गायत्री का जप करावे। तीन हजार गायत्री से होम करावे ब्राह्मणों द्वारा तब उपनयन की विधि को करे।

उपनयन विधि -

जिस बालक का उपनयन संस्कार हो उसको स्नान कराकर प्रातः देव पूजन करे, पिता नान्दी श्राद्ध करे। ब्राह्मणों का भोजन करावे। उनसे आशीर्वाद प्राप्त कर फिर कुमार को भोजन करावे। आज कुमार को नमक तथा मिर्च रहित भोजन करावे। भोजन के पूर्व तथा पश्चात् आचमन करावे। फिर शीतल जल में कुछ गर्मजल मिलाकर आचार्य पहिले बालक का सिर भिगोवे, बचे हुए जल से नाई बालक के सिर के बालों को भिगावे। पुनः आचार्य बालक के सिर के बालों में चारों दिशाओं में तीन-तीन कुश लपेट दे या बाँध दे। मूल नीचे की ओर रहे। तब आचार्य 'येनावयत्' मंत्र बोले नाई दक्षिण दिशा अर्थात् बालक के दाहिने ओर के बाल काटे। बालक की माता या बुआ या ब्रह्मचारी बालक की दाहिनी ओर बैठे। सांड के गोबर या बैल के गोबर के ऊपर उन बालों को रखता जावे। फिर आचार्य 'येन पूषो' इस मंत्र को पढ़े नाई पश्चिम की ओर का कुश युक्त बाल काटे। तब 'येन भूयः' इस मंत्र से बांई ओर के बाल, फिर पूर्व दिशा के बाल 'येन पूषा' इसी मंत्र का पाठ करे तब नाई उन केशों को काटता हुआ, वही वृषभ के गोबर पर रखता जावे। कटे हुए बाल भूमि पर न गिरने पावे। तब नाई दोबारा शिखा छोड़कर शेष सिर पर दो बार इसी क्रम में छुरा चलावे जिस क्रम में बाल काटे गये है। इन केशों को कोई पुरुष ले जाकर गूलर वृक्ष के नीचे जड़ में या कुशों के मध्य में रख आवे।

बालक को विधिवत् स्नान करावे।

अरणि मंथा से अग्नि प्रकट कर हस्त परिमित बेदी पर अग्नि का स्थापन करे। पूर्व में बेदी का संस्कार करे। कुशकण्डिका करे। (आपस्तंब ग्रह्य ३/१०/५-१०)

बालक को आचार्य अपनी दाहिनी ओर बिठावे। बालक आचार्य से कहे 'ब्रह्मचर्यमाजागाम' अर्थात् मैं ब्रह्मचर्य को प्राप्त हो गया हूँ। फिर बोले 'ब्रह्मचार्य सानि' (मैं ब्रह्मचारी बनूँ) अनन्तर आचार्य (येनेन्द्राय) मंत्र बोलकर वटु को कौपीन पहिनावे (फिर धोती तथा उत्तरीय पहिनावे) फिर 'इयं दुरुक्ता' इस मंत्र से मूंज की मेखला बाँध देवे। 'मित्रस्य चक्षु' इस मंत्र से मृगचर्म दे देवे। (मृगचर्म तो उनको है जो २५ वर्ष तक ब्रह्मचर्य आश्रम में वेद पाठार्थ जा रहे है।) कुमार आचमन करे तब यज्ञोपवीत सहित आचार्य को आठ पात्रों को दान करें। संकल्प 'अहं द्विजाधिकार प्रापृये नाना गोत्रेभ्यः ब्राह्मणेभ्यः सयज्ञोपवीतानि अष्टौ पात्राणि दातुमुत्सृजे।' यज्ञोपवीत पर ९ तन्तुओं में देवताओं का आवाहन करके 'यज्ञोपवीतं परमं' मंत्र से यज्ञोपवीत डाल देवे। (आपस्तंब ग्रह्य ३/१०-११ खण्ड) अग्नि में समिधा तथा गाय के गोबर को घृत सिक्त हवन करे।

फिर बालक अग्नि के उत्तर में बैठे। गुरु पीछे से दाहिने कंधे के ऊपर से हाथ ले जाकर कुमार की नाभि का स्पर्श करे। मंत्र 'अहुरः' पढ़े। फिर अग्नि के निकट पहुँच कर बहिर्स्तरणादि कर्म से आहुति तक कर्म करके पूर्व के समान अग्नि के उत्तर में गुरु के पास जावे। आचार्य पूर्व मुख से और कुमार पश्चिम मुख में खड़ा हो जावे। आचार्य कुमार की अंजलि में जल भरे। उस जल में प्रथम चन्दन-फूल-फल-सुपारी और यथा शक्ति सोना डाल देवे। ब्रह्मा ब्राह्मण आचार्य की अंजलि में जल भरे। आचार्य 'तत्सवितु वृणीमहे' मंत्र को पढ़कर अपनी अञ्जली का जल कुमार की अञ्जली में देवे। कुमार सूर्य का ध्यान करके अर्घपात्र में अञ्जली का जल छोड़े। पिता 'देवस्यत्वा' मंत्र को पढ़कर अंगूठे के सहित कुमार का हाथ ग्रहण करके कहे कि अमुक शर्मा दीर्घायु हो। फिर आचार्य कुमार का हृदय स्पर्श कर मंत्र पढ़े। इसके पश्चात् कुमार को दक्षिण में लावे। कुमार समिधा लेकर बिना मंत्र पढ़े अग्नि में छोड़े। तीन बार समंत्रक आहुति डाले। 'मानस्तोकेतनये' से त्रिपुण्ड्र लगावे। कंठ-नाभि-हृदय में भी लगावे। 'त्र्यायुषं जमदग्नेः' का पाठ करे। बालक अपने पिता के सामने पश्चिम मुख से कुशासन पर बैठकर आचार्य से गायत्री मंत्र देने की प्रार्थना करे। तब गुरु शिष्य के दोनों हाथ पकड़कर वस्त्र से ढंककर कुमार को गायत्री का उपदेश करे। आचार्य पहिले प्रणव ॐ पश्चात् भूर्भुवः स्वः फिर आधा तथा तीसरी बार में संपूर्ण गायत्री मंत्र कहलावे। ब्राह्मण को तीन प्रणव युक्त उपदेश देना चाहिये कोई मंत्र न सुन पावे फिर कुमार को मंत्र देकर दंड ग्रहण करावे। ब्राह्मण को पलाश का या बील का या पीपल का कान पर्यन्त ऊँचा दण्ड लेना चाहिये। क्षत्रिय का दण्ड वट का और वैश्य का वदर (बेर) का दंड होना चाहिये। दंड देकर व्रत का उपदेश देना चाहिये। आचार्य मम व्रतं कहकर कुमार का हृदय स्पर्श करे। कुमार प्राणायाम करे। अब कुमार ब्रह्मचारी को भिक्षा के लिए भेजे। सर्व प्रथम माता-पिता-मौसी-बुआ-मामी से भिक्षा मांगे। पिता से 'भवान् भिक्षां ददातु' तथा माता से 'भवति भिक्षां मे देहि' माता कुमार को भिक्षा में कुछ चावल भी देवे। वह भिक्षा शिष्य सभी गुरु को देवे। (आश्वलायन स्मृति उपनयन प्रकरण १-३८)

पुनः उपनयन -

* लहसुन-प्याज-गाजर-तम्बाकू सुर्ती-गृञ्जन यह लहसुन के आकार के लाल रंग का सूक्ष्म कन्द होता है। यह खाने पर पुनः सशिख मुण्डन कर उपनयन करे। (निर्णय तृ. परि.)

* ऊँटनी-कुत्ती-स्त्री-हथिनी-घोड़ी-गधी का दूध पीले तो भी पुनः उपनयन संस्कार के योग्य होता है। (निर्णय तृ.प.पृ. ५६०)

* यदि जरसी गाय (विदेशी गाय) का दूध पीले तो भी पुनः उपनयन संस्कार से शुद्धि होगी।

* बकरी-भेड़ी या सांकर्य युक्त पशु जैसे ज़रसी गाय का दुग्ध पान करे तो पुनः उपनयन से शुद्धि होगी।

* यदि द्विजाति मरकर पुनः जीवित हो जाय तो जल में डुबाकर पुनः जातकर्मादि संस्कार से लेकर पूरे संस्कार उपनयन तक पुनः करावे। (निर्णय सि.तृ.प.पृ ५६०)

* प्रेत की शैय्यादान लेने वाले ब्राह्मण का पुनः उपनयन करावे।'प्रेत शय्या प्रतिग्राही पुनः संस्कार मर्हति।' (निर्णय पृ. ५६०)

* गधा, ऊँट, भैंसा, बैल, बकरा, भेड़ा पर चढ़कर कोश पर्यन्त यात्रा करने वाले का पुनः उपवीत संस्कार हो। (निर्णय.तृ.परि.पृ. ५६०)

* यदि गधे पर चढ़कर ४ कोश ब्राह्मण चला जावे तो तीन तपृकृच्छ्र करे। घृत गर्भ के विधान से जातकर्मादि संस्कार उपनयन पर्यन्त करे। (नि. सिन्धु तथैव)

* यदि ब्राह्मण क्षत्रिय तथा वैश्य अज्ञान से भी विष्ठा-मूत्र या मदिरा का पान कर ले तो पुनः संस्कार के योग्य है।

अज्ञानात्प्राश्य विण्मूत्रं सुरासंसृष्टमेवच।

पुनः संस्कारमर्हन्ति त्रयो वर्णा द्विजातयः॥ (तथैव)

* पराशर ने कहा है कि कोई ब्रह्मचर्य से सीधे संन्यास धारण कर ले फिर च्युत हो जावे। मैथुनादि कर्मरत् होता है तो तीन कृच्छ्रव्रत-तीन चांद्रायण और जातकर्मादि संपूर्ण संस्कार पुनः विधिवत् किये जावें। (निर्णय ३ प.पृ. ७१)

* पिता-गुरु और ज्येष्ठ भाई के अलावा किसी अन्य का जूठा भोजन करने पर, मदिरा, मांस, प्रेतश्राद्ध, मरण-जनन का आशौच होने पर उनके घर भोजन करने पर। अपनी विवाहिता स्त्री के साथ एक ही पात्र में भोजन करने से। दश दिन तक व्याई हुई गाय का दुध खाने से, छत्राक खा लेने से, (कुकुरमुत्ता जिसे बंगाली खाते है) गौद, भक्षण, वैश्या का अन्न, पञ्चायती अन्न, सामूहिक धन खाने से पुनः यज्ञोपवीत संस्कार कराना चाहिये। (तथैव)

* सौराष्ट्र, सिन्धु, सौवीर और दक्षिण देशों में बिना तीर्थ पर्यटन तथा बिना भगवत्प्रयोजन के जाने पर संस्कार करे। (तथैव निर्णय.)

* त्रिस्थली सेतु में कहा है- कर्मनाशा नदी के जल स्पर्श से करतोया नदी के लंघन

से गण्डकी नदी को बाहुओं से तैरने पर फिर से संस्कार करने के योग्य हो जाता है। किन्तु इसमें करतोया नदी के स्नान का पुण्यकर्मों में प्रशस्त कहा है। (निर्णय तथैव)

वेदारंभ संस्कार -

उपनयन के पश्चात् आचार्य उपनयन के ही नक्षत्र दिनों में संकल्प करे-

ॐ -अमुकोऽहं अमुकगोत्रस्य कमुकनाम शर्मण: सर्व ब्रह्मता सिद्ध ये बेदारंभाहं करिष्ये। फिर वटु से आचार्य गणपति-मातृका-नान्दी मुख श्राद्ध सम्पन्न करावे। पुन: वेदारंभार्थ अग्नि प्रतिष्ठा करे। हवन करे। वटु संक्षेप में सरस्वती-यजुर्वेद तथा गुरु का पूजन करे। फिर वटु आग्रह करे पश्चात् आचार्य वेद पढ़ावे। गायत्री वेद माता है गायत्री के उपदेश के पश्चात् चारों वेदों का १-१ मंत्र पढ़ावे। फिर चारों वेदों के प्रथम मंत्रों से हवन करके भस्म धारण करे। पश्चात् १० ब्राह्मणों का भोजन कराके संस्कार संपन्न करना चाहिये।

११. समावर्तन संस्कार -

ब्रह्मचर्याश्रम के पश्चात् गृहस्थ में प्रवेश की आज्ञा को समावर्तन संस्कार कहते हैं। रिक्ता तिथि, मंगल, शनिवार, पौष आषाढ़ माह और दक्षिणायन सूर्य में इनमें समावर्तन करना चाहिये। गुरु-शुक्र आदि का अस्त न होवे। रिक्ता-त्रयोदशी-पूर्णिमा-अमावस्या-अष्टमी-प्रतिपदा इनसे भिन्न तिथि, शुक्लपक्ष में पुष्य-पुनर्वसु-मृगशिर-रेवती-हस्त-अनुराधा-तीनों उत्तरा-रोहिणी-श्रवण-विशाखा चित्रा इन नक्षत्रों में अथवा यज्ञोपवीत के नक्षत्रों में समावर्तन करना चाहिये। आचार्य को २ वस्त्र २ कुण्डल, छतरी, जूता, माला, दण्ड, उत्तरीय तथा मिष्ठान्न देवे। (धर्मसिन्धु ३ प.पृ. ३५०)

संकल्प -वटु स्वयं संकल्प करे- मम गृहस्थाश्रम अर्हता सिद्धि द्वारा परमेश्वर प्रीत्यर्थ समावर्तनं करिष्ये। करके गणेश-गौरी पुण्याहवाचन-मातृका पूजन तथा वटु स्वयं नांदी श्राद्ध करे। यदि पिता-माता उपलब्ध हो तो वे भी नांदी श्राद्ध कर्म कर सकते हैं। वटु के प्रतिनिधि बनकर पिता नांदी श्राद्ध करे। फिर दश या तीन ब्राह्मणों को भोजन करावे। फिर वह संकल्प करे कि अब मैं गृहस्थ धर्म में प्रवेश करूंगा, कभी भी निर्निमित्त रात्रि स्नान, नग्न स्नान, नग्न शयन, मैथुन के अलावा कभी भी नग्न स्त्री दर्शन, जल वर्षा में दौड़कर चलना, वृक्षों पर चढ़ना, कुएँ में उतरना, भुजाओं से पूरी नदी को तैरना, भयंकर स्थानों में प्रवेश नहीं करूंगा। मैं जल से भरा कमण्डलु, छतरी, पगड़ी, जूता, कुण्डल, कुशा इनको धारण करूंगा। कैंची के द्वारा नख, दाढ़ी, केश इनको छोटा रखूंगा। बिना पर्व के मुण्डन नहीं करूंगा। नित्य अध्ययन करूंगा। शुक्ल वस्त्र धारण

करूंगा। सुगंधित वस्तुएँ तैलादि धारण करूंगा। फटा तथा मलिन वस्त्र धारण नहीं करूंगा गुरु के अलावा किसी की उतारी माला-वस्त्र धारण नहीं करूंगा। जल में छाया नहीं देखूंगा। अपनी स्त्री के साथ एक पात्र में भोजन नहीं करूंगा। दो वस्त्र धारण करूंगा। शूद्र को यज्ञावशिष्टादि नहीं दूंगा। लाल वस्त्र धारण नहीं करूंगा। खड़े होकर जलाचमन नहीं करूंगा (जल में व्यक्ति जांघ पर्यन्त खड़े होकर आचमन कर सकता है।) पैर से पैर रगड़कर नहीं धोऊंगा। मस्तक बाँधकर पर्यटन नहीं करूंगा। जूता पहिने जल पीना भोजन करना नहीं करूंगा। कभी पर स्त्री से गमन नहीं करूंगा। जूता पहिने देव-विप्रों गुरुओं को प्रणाम नहीं करूंगा। पैर से आसन को नहीं खीचूंगा। ऊपर की प्रतिज्ञाओं को पूरा न कर पाऊँ तो तीन दिन रात्रि भोजन नहीं करूंगा। जो प्रमाद से भूल हो जावे तो अहोरात्र (1 दिन का) व्रत करूंगा। सामर्थ्यहीन होने पर एक या तीन ब्राह्मणों को भोजन करावे। (धर्म सिन्धु प. ३ पृ. ३६२-६३)

तत्पश्चात् भस्म धारण करे, अग्नि को प्रणाम करे, कलश तथा आचार्य को प्रणाम करे। अग्नि के उत्तर में कुश के अग्रभाग को बिखेरकर उनके ऊपर आठ जल पूर्ण कलशों को रखकर पूर्वाभिमुख होकर एक घड़े में आम्रपल्लव से जल लेकर 'ये अपस्वंतरग्नय:' मंत्र से आचार्य वटु का अभिषेक करे। इसी मंत्र से आठों कलशों का जल छिड़के। इसके पश्चात् (ॐ उदुत्तमं वरुणपाश) इस मंत्र से मेखला को शिरो मार्ग से निकाले। मृगचर्म तथा दंड को भी नीचे रख दे। फिर सूर्य का उपस्थान करे।

तत्पश्चात् तिल से युक्त दही का थोड़ा भक्षण करे। नख कर्तन करे। मुण्डन करावे गूलर की दातौन करके स्नान करे। सुगंधित तेल इत्र लगावे। मस्तक पर तिलक लगावे। दो यज्ञोपवीत धारण करे। सुन्दर वस्त्र श्वेत पहिने। आचार्य को दक्षिणा देकर अपने घर लौटे। (तुलसी पीठ सौर (जून १२) पृ. ९ तुलसी पीठाधीश्वर श्री रामानंदाचार्य)

१३. विवाह संस्कार -

विवाह वासना पूर्ति का साधन नहीं। विवाह एक पावन वैदिक संस्कार है, जो व्यक्ति को पतन से बचा कर एक उपासना के श्रेष्ठ मार्ग में प्रवेश कराता है। हमारे यहां शास्त्रों में चार विवाह वैदिक तथा सर्वश्रेष्ठ मान्य हैं। ब्राह्म-दैव-आर्ष और प्राजापत्य चार विवाह अवैदिक है, आसुर गान्धर्व-राक्षस और पिशाच। यह अवैदिक हैं।

ब्राह्म विवाह वह है जिसमें कुलीन वर को अपने द्वार पर बुलाकर वस्त्राभूषण द्रव्यादि देकर कन्यादान की जाती है। दैव विवाह यज्ञादि देवकार्य-धर्मकार्यार्थ जो विवाह किया जाता। तथा पूर्व में ऋत्विकादि को जो कन्या दी जाती थी। वह दैव विवाह कहा

जाता है। वर से कुछ शर्त रखकर विवाह किया जाता है वह आर्ष विवाह होता है प्राजापत्य विवाह में सन्तानोत्पत्ति के विशिष्ट अभिप्राय से जो कन्या दी जाती है वह प्राजापत्य विवाह कहलाता है। दहेज निश्चित करके विवाह आसुर विवाह। वर-वधू की स्वेच्छा से जो विवाह है वह गंधर्व विवाह, हत्या करके कन्या को बलात् ले जाना राक्षस विवाह, और सोती हुई या चोरी से किसी कन्या को उठाकर ले जाकर उसके साथ वासनावश जीवन चलाने को पिचाश विवाह कहते हैं। ये उत्तरार्द्ध के चार विवाह शास्त्रों ने अमान्य तथा अशुद्ध माने हैं। अत: इनका कभी अनुकरण नहीं करना चाहिये। (धर्म सिन्धु 3 परि पृ. ४०६) बिना विवाह किये धर्म कार्यों का अधिकार प्राप्त नहीं होता अत: स्त्री धर्म के लिये विवाही जाती है-भोगादि के लिए नहीं।

पत्नी धर्मकामार्थानां कारणं प्रवरं स्मृतम्।

अपत्नीको नरो भूप कर्मयोग्यो न जायते॥

ब्राह्मण: क्षत्रियो वापि वैश्य: शूद्रोऽपि वा नर:॥ (आपस्तंव पृ. ४६) यह संस्कार चारो वर्णों के लिए आवश्यक है।

छोटी आयु वाले का विवाह पहिले कभी भी न करे-

जो बड़े भाई के जीवित तथा योग्य रहते छोटे का विवाह पहिले तथा बड़े का पीछे विवाह किया जाता है, वह परिवेत्ता दोष माना जाता है। इसी प्रकार छोटी पुत्री का पूर्व में बड़ी पुत्री का पश्चात् में विवाह अशास्त्रीय है यदि बड़ा भाई या बड़ी बहिन पागल, अयोग्य, विकलांग, बहिष्कृत या पतित हो तो ऐसी अवस्था में द्वितीय संतान का विवाह किया जा सकता है सौतेली माता के पुत्र-पुत्रियों में यह विचार मान्य नहीं है। यदि कदाचित् ऐसा कर दिया गया हो तो वर-वधू उनके माता-पिता तथा पुरोहित को चान्द्रायण व्रतादि करके अपनी शुद्धि कर लेनी चाहिये। (धर्म सिन्धु ३ परि. पृ. ४०६)

कन्यादान कौन करेगा -

कन्यादान मुख्यत: पिता को ही करने का शास्त्र में विधान है, पिता न हो तो पितामह-भाई-काका-नाना-मामा इस क्रम में दान करें। एक के न होने पर अगले को अधिकार है। पिता-पितामहादि के रहने पर मामा को कन्यादान का अधिकार नहीं है। (धर्म सिन्धु पृ. ४०७ तथा निर्णय सिन्धु)

दूसरे की कन्या का दान -

यदि धर्मार्थ किसी अन्य की कन्या का दान करना हो तो पूर्व में कुछ स्वर्णदान करके कन्या को अपनी बनावे, फिर उस कन्या का धर्म विधि से दान करे। (धर्म. पृ. ४०७)

विवाह मुहूर्त -

विवाह माघ-फाल्गुन-बैशाख तथा ज्येष्ठ में सर्वश्रेष्ठ है। मार्गशीर्ष में भी मध्यम है। मिथुन की संक्रांति में आषाढ़ भी मध्यम है। प्रथम पुत्र-प्रथम पुत्री का विवाह ज्येष्ठ में मना है। यदि एक ज्येष्ठ तथा एक कनिष्ठ होवे तो ज्येष्ठ मास में विवाह मध्यम होता है। जन्म मास तथा जन्म नक्षत्र विवाह में निषेध है। पाणिग्रहण के समय के लिए गोधूलि बेला शूद्रादि को ठीक है। ब्राह्मणादि को गोधूलि बेला में विवाह संकट काल में ही करणीय है अन्यथा नहीं। विवाह में अमावस्या नहीं लेनी चाहिये। चतुर्थी-नवमी-चतुर्दशी-अष्टमी-षष्ठी ये अल्पफल वाली है। शुक्लपक्ष श्रेष्ठ तथा कृष्णपक्ष त्रयोदशी तक मध्यम है। सोम-बुध-गुरु-शुक्र ये दिन शुभ है। रोहिणी, मृगशिर, मघा, तीनों उत्तरा, हस्त, स्वाती, मूल, अनुराधा और रेवती नक्षत्र शुभ है। चंद्र-गुरु-सूर्य शुद्धि पर भी पूर्ण विचार करे। घात चंद्रमा, मृत्युयोग, परिध, भद्रा, वैधृति, विष्कुम्भ, तिथिक्षय, संक्रांति, ग्रहण के नक्षत्र में विवाह मना है। (धर्म सिन्धु पृ. ४१०-४१२) आपस्तंब ग्रह्यसूत्र में आषाढ़ मास निषेध है (आपस्तंब सूत्र १२)

वैधव्यहर कुंभ विवाह- यदि बालिका की पत्रिका में वैधव्य योग हो तो पिता घट को स्थापित कर वरुण पूजा कर विष्णु प्रतिमा स्थापित कर अपनी कन्या को विष्णु को अर्पण करे। कन्या और घट को धागा से तीन बार लपेट देवे, मंत्रोच्चार करे। फिर कुंभ को किसी जलाशय में डुबा देवे। ब्राह्मणों से कन्या का अभिषेक शुद्धजल से कराकर, विप्र भोज तथा दक्षिणा दान करे। (धर्म सिन्धु पृ. ४१४)

कन्यादान प्रशंसा -

जो अपनी कन्या को वस्त्राभूषण से सज्जित करके योग्य वर को दान करता है, वह कन्यादाता, अश्वमेध यज्ञ का करने वाला और जीवन दान करने वाले को एक समान पुण्य की प्राप्ति होती है कन्यादान करने वाले के पिता-पितामहादि सभी पितर पापों से मुक्त होकर तुख्त ब्रह्मलोक चले जाते है।

'कन्या प्रदाताश्वमेधयाजी भयेषु प्राणदाता चेति त्रयः सम पुण्याः'

श्रुत्वा कन्या प्रदातारं पितरः सपितामहाः।

मुक्त्वा सर्व पापेभ्यो ब्रह्मलोकं व्रजन्ति ते॥

(धर्म सिन्धु ३ परि. पृ. ४१५)

कन्यादानकर्ता को दासी-महिषी-गाय-गज-अश्व-स्वर्ण-पुस्तक, शय्या-गृह-स्वर्ण, चाँदी-तांबा-कांसा तथा वृषभ दान करने के प्रमाण कौस्तुभ ग्रंथ में है। किन्तु आजकल

सर्वत्र लोहा (स्टील) दान ही प्रशस्त है, यह युग की विडम्बना है।

कन्या के लिए गुरु शुद्धि -

कन्या की राशि से चौथा-आठवां-बारहवां गुरु निषेध है पर गर्ग ने कहा है कि 12 वर्ष की कन्या को गुरु दोष नहीं है। यदि कन्या रजस्वला हो गई तो गुरु शुद्धि की आवश्यकता नहीं है। आठवें गुरु में त्रिगुणित पूजा करे।

रजस्वलाया: कन्याया गुरु शुद्धिं न चिन्तयेत्।

अष्टमेऽपि प्रकर्तव्यो विवाहस्त्रिगुणार्चनात्॥ (निर्णय सिन्धु ३ परि.पृ. ६०१)

विवाह में मंगल द्रव्य-

विवाह के लिए स्नान, शुद्धवस्त्र, गन्धों का लेप, माला, नापितकर्म, शंख, दुन्दुभि-वीणा-वाद्ययंत्र, कुलांगनाओं के गीत, सुन्दर रंग-बिरंगे वस्त्र, छत्र धारण, ध्वजा तोरण आदि। (आपस्तंब गृह्य १/१४) को मंगल द्रव्य माना गया है।

विवाह पूर्व स्नान -

वैसे तो स्नान साधारण सा कार्य है, पर वैवाहिक स्नान मुख्य है। सौभाग्यवती घर की स्त्रियाँ शुभ समय में कन्या को उबटन लगाकर कन्या के उपस्थ (गुप्रेन्द्रिय) को भी अच्छी प्रकार उबटन से मलकर स्वच्छ करे, विवाह के योग्य तभी कन्या मान्य है। बालक के स्नान में पुरोहित या पवित्र ब्राह्मण उत्तरीय से अपने कान और सिर को ढंककर जल भरा हुआ कलश अपने मस्तक पर रखकर वेद मंत्र से वर को स्नान करावे। (खादिर ग्रह्य खंड ३ पृ २१) कन्या का स्नान पाणिग्रहण के पूर्व होना है। स्नानान्तर तुरन्त पाणिग्रहण में आवे। (गोभिल ग्रह्य सूत्र प्र. २ खं. १-१७) आपस्तंब ने कन्या को ८ घड़ों से ब्राह्मणों के द्वारा स्नान कराने का विधान लिखा है। पांच घड़ों से समंत्रक स्नान तथा तीन घड़ों से अमंत्रक स्नान करावे। घड़ों में छेद होवे उस छेद में से निकला हुआ जल स्वर्ण से छूता हुआ कन्या के मस्तक पर गिरे। (आपस्तंब २१७) शूद्र कन्या में संस्कारों में वेदमंत्रों की आवश्यकता नहीं है। (पारस्कर ग्रह्य १/४/११)

सर्वेषां शूद्रामप्येके मन्त्रवर्जम्॥ (१/४/११)

ब्यूटी पार्लर-

वर्तमान में कन्या को ब्यूटी पार्लर से अपवित्र कराकर बुलाई जाती है। वह सर्वथा अग्राह्य-अमान्य-अशास्त्रीय-अप्रमाणिक तथा पूर्ण अपवित्र हो चुकी है। यह परंपरा अति विनाशकारी है। जिस स्नान की हुई कन्या को कोई छू नहीं सकता था, उसी कन्या

को अपवित्र कर्मचारिणी छूकर-बाल काटकर सजाती है। बाल छील देने पर कोई भी व्यक्ति हो वह शवयात्रा में जाने के समान अपवित्र हो जाता है। फिर विवाह जैसे कार्य में तो यह महान अनर्थ है। कुछ क्षणों के आकर्षणार्थ ब्यूटी पार्लर का बनावटी पन कराने से लाभ नहीं है। वह रासायनिक पदार्थों का सेवन तथा ब्यूटी पार्लर के कुकर्म कन्या की प्राकृतिकता-पवित्रता-मृदुता-दिव्यता-भव्यता-नव्यता तथा पावनता को सर्वथा नष्ट कर देती है। इस पाप कर्म से बचना चाहिये।

`वरण काल में-

वरण काल में बुलाई हुई कन्या को सोती हुई, रोती हुई या भागती हुई कन्या को कदापि वरण न करे।

सुप्तां रुदन्तीं निष्क्रान्तां वरणे परिवर्जयेत्॥ (आपस्तंब १/११)

जब ऋषि इस प्रकार की कन्या को वर्जित कर रहे हैं जो सूक्ष्म खिन्ना है। फिर बलात् कन्या से विवाह करने का कर्म करते हैं उनकी पाप परायणता का परिणाम क्या होगा?

कन्या को यज्ञोपवीत पहिनाने की आवश्यकता नहीं -

विवाह काल में वर को तो उपनीत किया ही जाता है किन्तु कन्या को जनेऊ की आवश्यकता नहीं है। गोभिल गृह्य सूत्र के 'प्रावृतां यज्ञोपवीतिनी' शब्द लिखा है, पर सम्पूर्ण आचार्य इसका विरोध करते हैं। अतः वहाँ गोभिल का तात्पर्य है कि वस्त्र पहिनाकर यज्ञोपवीत वत् एक वस्त्र कन्या को डाल देवे। ऐसा वेद मंत्रों में भी निर्देश है। (नारी धर्म विमर्श)

यदि किसी का मरण हो जावे तब -

विवाह के निश्चित होने पर यदि दोनों पक्ष में से किसी के यहाँ मरण हो जावे तो, पिता के मरण में एक वर्ष, मातृ मरण में ६ माह, पत्नी मरण में ३ माह, भ्रातृ और पुत्र मरण में डेढ़ माह किसी अन्य सपिण्ड के मरण पर एक माह तक का आशौच होता है अतः इतने दिन विवाह रोका जाना चाहिये। यदि अत्यावश्यक परिस्थिति हो तो ब्राह्मणों से आज्ञा लेकर विनायक शान्ति विधान करके विवाह करे।

तदन्ते शान्तिकं कृत्वा ततो लग्नं विधीयते। (निर्णय सिन्धु तृतीय परि. पृ. ६११)

यदि माता रजस्वला हो जावे -

यदि वर या वधू की माता नान्दी श्राद्ध के पश्चात् रजस्वला हो जावे तो होमपूर्वक

गोदान करके विवाह उपनयन आदि मंगल कार्य सम्पन्न करे। एक मासे की सुवर्ण की पद्मा की मूर्ति बनाकर श्रीसूक्त के विधान से अर्चन करे प्रत्येक ऋचा से पायसद्वारा हवन करें। (तथैव पृ. ६१६)

एक विवाह के पश्चात् दूसरा विवाह नहीं-

भाई के विवाह के पश्चात् बहिन का या बहिन विवाह के पश्चात् भाई का विवाह छै माह तक न करे। तीन ऋतु व्यतीत हो जावे तब विवाह करे नहीं तो अमंगल होता है। यह नियम सहोदरों के लिए हैं। सौतेले या पारिवारिक विवाहों में नहीं। विवाह के पश्चात् छह माह तक मुण्डन न करे। (तथैव पृ. ६१७)

विवाह के पश्चात् घर में श्राद्ध नहीं -

विवाह के पश्चात् १ वर्ष तक घर में पार्वण श्राद्ध, यज्ञोपवीत के पश्चात् छै माह तक और मुण्डन के पश्चात् तीन माह तक घर में श्राद्ध न करे। पर क्षयाह तथा पितृपक्ष में करना चाहिये। यह नियम गया अथवा अन्य तीर्थों में नहीं है। (निर्णय सिन्धु)+(भगवन्त भास्कर)

अनाथ का विवाह -

जो किसी माता-पिता से रहित बालक का उपनयन संस्कार-विवाह अथवा मातृ पितृ रहित कन्या का विवाह करता है उसके पुण्यों की संख्या की गणना नहीं की जा सकती। (दक्षस्मृति-निर्णय पृ. ६२५ तृतीय)

विवाह का मण्डप -

जहाँ वर-वधू का विवाह होना है वह मण्डप आठ हाथ-बारह हाथ-सोलह हाथ या अठारह हाथ का लम्बा चौड़ा बनावे। (वसिष्ठ निर्णय पृ. ६२६)

कन्या का पुनर्विवाह -

कन्या के विवाहोपरान्त पति की तुरन्त-मृत्यु होती है तो ऐसी कन्या अक्षत योनि होने से पुनर्विवाह के योग्य है। (निर्णय सिन्धु पृ. ६२८ तृतीय परिच्छेद)

कन्यादान तथा कन्याग्रहण में मुंह कहाँ करें-

कन्यादान करने वाला का मुख पश्चिम में तथा कन्याग्रहण करने वाले वर का मुख पूर्व में होना चाहिये। (ग्रह्यपरिशिष्ट निर्णय. ३ परि. पृ. ६३४) पत्नी को दक्षिण में बिठावे कन्या को पश्चिम मुख करके संकल्प करे। (धर्म सिंधु ३ परि.)

विवाह के पश्चात् -

विवाह करने के पश्चात् एक वर्ष तक मृतक के साथ श्मशान न जावे। जिस तीर्थ में कभी नहीं गये उसी तीर्थ में न जावे। जिस तीर्थ में पूर्व में जा चुके हैं। वहाँ जा सकते हैं। घर का व्यक्ति एक वर्ष तक मुण्डन न करावे। (धर्म सिन्धु)

पाणिग्रहण विधि-

विवाह के पूर्व एक दिन या दो दिन पूर्व शुभ मुहूर्त में गणपति-मातृ का-पुण्याहवाचन-कलश स्थापन-नान्दी श्राद्ध सम्पन्न करे। मंडपाच्छादन में स्तंभ स्थापन के पूर्व मंत्रों से मंगल द्रव्य-पंचामृतादि गर्त में छोड़कर स्तंभ स्थापन करें। फिर द्वार चार पाणिग्रहण वैदिक विधि से संपन्न करे। वह विधियाँ वैदिक विवाह पद्धतियों में लिखी हुई।

बधू प्रवेश-

विवाह के पश्चात् छटवे, आठवे, दशवे या बारहवें दिन बूध का प्रवेश बिना किसी मुहूर्त नक्षत्र चंद्रमा तथा बिना शुक्र बिचार के भी कर सकते हैं। यदि नहीं किया तो फिर विषम वर्षो में तीन-पाँचवे वर्ष में करे। (निर्णय सिन्धु तृतीय परि.पृ. ६२७)

मंगल विवाह में अमंगलों का प्रवेश-

विवाह से बढ़कर कोई मंगल कृत्य नहीं होता पर इस परम मंगल में जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुण्यकर्म है वह भोजन है। जितने लोग भोजन करें उतना ही आशीर्वाद वर वधू का मंगल करता है वह कार्य अब बफर प्रयोग से सर्वथा दूषित हो चुका है। टेबिलों पर रखा भोजन जिसमें स्पर्श-अस्पर्श-उच्छिष्ट-अनुच्छिष्ट का कोई विचार नहीं। वर्णाश्रम मर्यादा की कोई विधि नहीं। पलाश की पत्तल में मंगल भोज कराने से स्वर्ण थाल में भोज कराने का पुण्य तथा पितरों की प्रसन्नता होती थी, वह पितर अब स्वर्ग में भी रोते होंगे अपने पुत्रों की करतूत पर। नरक जाने का सीधा मार्ग आज के विवाह की गतिविधियाँ है। लहसुन-प्याज का प्रयोग विवाह रूपी यज्ञ में होना निषेध था, वह अब ससम्मान हो रहा है। विवाह यज्ञ नहीं अब विवाह नास्तिकों की पार्टियाँ रह गया। मदिरा के अपावन सेवन के बिना तो शायद ही कोई विवाह यज्ञ पूर्ण हो। संभव भी नहीं लग रहा है। इन विवाहों के करने से आध्यात्मिक-शास्त्रीय धर्मलाभ लेशमात्र भी नहीं है। मात्र अधर्म ही अधर्म। कहाँ वेद मंत्रों की पावन ध्वनि से सुवासित सुगंधित भगवान् का प्रसाद ग्रहण होता था। वहाँ जूता-चप्पल पहिनकर-रजस्वला तथा सभी वर्ग एक साथ भोजन कर रहे है। दहेज की याचना का महापाप, ब्यूटीपार्लर का पतित कार्य, व्यसनों से स्वागत, शास्त्र की पाणिग्रहण विधि का उल्लंघन, बिना मुहूर्त, बिना लग्न के पाणिग्रहण

यह सभी कृत्य न केवल हमारी वर्तमान विधि को अपितु आने वाली पीढ़ी को भी दूषित कर रही है। जिसका दुष्परिणाम आज हम नेत्रों से देख रहे हैं। भविष्य के लिए सावधान। जब विवाह वेदविधि से संपन्न होते थे। तब वर-वधू का जीवन का प्रथम चरण मर्यादा प्रधान द्वितीय चरण व्यवस्था प्रधान, तृतीय चरण आश्रय प्रधान होता था। विवाह के प्रथम चरण में परस्पर पावन प्रीति और वासना का प्रश्न नहीं वृद्धावस्था में यह प्रीति अति प्रीति में परिणित होती थी। संपूर्ण दाम्पत्य जीवन में रस होता था। पति-पत्नी परस्पर मिलकर जीवन के सुख-दुख की अनेक घाटियों को पार करते हुए पावन संतान को जन्म देकर धन्य होते थे। यह था वैदिक विवाहों का पावन परिणाम।

आज की स्वरुचिगृहीत पत्नी तथा पति की आरंभिक बेला अत्यन्त वासना प्रधान तुरन्त ही कुछ दिन पश्चात् मन मुटाव, ५-७ वर्ष में विवाह विच्छेद न्यायालय की शरण। यह है आज के विवाहों का कुपरिणाम। वैदिक विधि के विवाहों में काले कलूटे पति-पत्नी की जीवन पर्यन्त एक दूसरे पर परम प्रीति में न्यौछावर होकर एक पत्नीव्रत-पतिव्रत रखते हुए आनंद करते थे। संस्कारों के परिणाम से इहलोक भी सानंद तथा परलोक में भी सुख प्राप्त करता है। भगवान का वाक्य है।

यः शास्त्र विधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्॥ (गीता)

यदि शास्त्र विधि से नहीं चले तो इस लोक में सुख नहीं होता, मरणोपरान्त शान्ति नहीं होती।

१४. विवाहाग्नि ग्रहण संस्कार - (आवसथ्याधान)

प्रातःकाल स्नानादि करके शुद्ध भूमि में पति-पत्नी दोनों पृथक-पृथक आसनों पर दोनों पूर्वाभिमुख बैठे आचमन-प्राणायामादि करके देशकाल कथन के पश्चात् ॐ आवसथ्याग्निमहमाधास्ये कहकर संकल्प करे, फिर स्वस्ति पुण्याह वाचन- आभ्युदयिक श्राद्ध आदि करे। एक गोदान कर देवे।

यजमान सपत्नीक नवीन दो-दो वस्त्र धारण करके दो कुश, आज्य स्थाली, उदुम्बर की चरुस्थाली, पलाश की समिधाएँ दक्षिणा या पूर्णपात्र, पूर्व में आधार-कोणों में आज्य भाग का स्थापन करके मन्थन पक्ष में पत्नी अधर अरणि को और यजमान उत्तर अरणि को ले। ग्राह्याग्नि वेदी का निर्माण भी कर लेना चाहिये। वह यजमान के अंगुल से १४ अंगुल माप की हो। पृथ्वी से १२ अंगुल की ऊंचाई तथा ६-६ अंगुल की दो मेखला वाला गोलाकार रखे।

पुन: पंच भूसंस्कार करके कुण्ड पर वस्त्राच्छादन करे। यजमान पूर्वाभिमुख दोनों हाथ से ओखली को दबावे। पत्नी पश्चिमाभिमुख होकर मन्थन करे। अग्नि प्राकट्य पर कुण्ड में स्थापित करे। कुशकण्डिका करे पश्चात् प्रजापति से आरंभ करके १४ आहुति देवे अन्त में व्याहृति होम करे (आहुति के मंत्र ग्रंथ के परिशिष्ट में देखें)

तत्पश्चात् श्रोताधान संस्कार करे इसमें गार्हपत्य, आवहनीय और दक्षिणाग्नि तीनों के संग्रह का उद्देश्य निहित है। इसे अग्न्याधेय भी कहते है। (विधि परिशिष्ट में देखें।)

१५. वर्धापन संस्कार - (जन्मदिन संस्कार)

भारतीय सनातन धर्मानुसार प्रति वर्ष वर्धापन संस्कार को भी पूर्ण करना चाहिये। वर्तमान में 'बर्थ डे' की विडम्बना अत्यन्त कुत्सित-गर्हित तथा कलुषित हो चुकी है। अंग्रेजी तिथि के अनुसार जन्म दिन को स्वीकार करना सर्वथा अनुचित है। भारतीय पंचांग के अनुसार अपनी जन्म तिथि को मानना चाहिये उसी से धर्म तथा पुण्य की वृद्धि होती है। अंग्रेजी दिनांक में जन्म दिन मानने की पद्धति पूर्णत: अमान्य तथा असत्य है। इसका पूर्ण निषेध होना चाहिये। दीपक बुझाना-केक कटाना आदि आदि अशास्त्रीय विधियों का अनुकरण पाश्चात्यों का अन्धानुकरण मात्र है, उसमें कोई पुण्य वृद्धि नहीं होती है। अत: तिथि तथा हिन्दी महिनों से सूर्य संक्रांति से जन्म दिन मानना चाहिये। अंग्रेजी तिथियों में मनाने का कोई महत्व नहीं है।

जन्म दिन में प्रात: उबटन तिल का बनावे (काले तिल पानी में पीसकर) शरीर में लगाकर फिर पवित्र जल में स्नान करे। नूतन वस्त्र धारण करे, धोती अवश्य पहिने। बिना कच्छ के सभी कार्य निष्फल हैं।

'कच्छ हीनोऽधमाधम:।' अत: धोती अवश्य धारण करे। फिर अक्षत पुञ्जो पर देवताओं का आवाहन करे। प्रतिष्ठा करे। सर्व प्रथम कुल देवतायै नम: इसके पश्चात् जन्म नक्षत्र- माता पिता प्रजापति-सूर्य-गणेश- मार्कण्डेय, व्यास, परशुराम, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, बलि, प्रहलाद, हनुमान, विभीषण और षष्ठी देवी का आवाहन करके पूजा करे। फिर मार्कण्डेयजी को श्वेत तिल-गुड़ मिश्रित दूध देवे। षष्ठी देवी को दही भात का नैवेद्य अर्पित करे। (धर्म सिन्धु तृ.पू.) जिसका जन्म दिन है उसको मार्कण्डेयजी का दूध-तिल-गुड़ बचा हुआ पिला देना चाहिये। धर्म सिन्धु में इन आवाहित देवताओं को आहुति देने का भी विधान लिखा है।

तत्पश्चात् ब्राह्मणों को-अतिथियों को परिवारजनों को सात्विक भोजन करावे। लेसन-प्याज इस दिन कभी भी न खावे। (धर्म सिन्धु) इस दिन किसी विशेष आयुवृद्ध को

अवश्य सम्मानित कर उनका आशीर्वाद ग्रहण करें। जन्म दिन संस्कार के दिन कुछ नियमों का पालन अवश्य किये जावें।

१. जन्मदिन में नाखून तथा बाल कभी न कटावे दाढ़ी भी अपने हाथ से नहीं बनायें।
२. इस दिन पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करें। अधिक भागदौड़ न करें-बहुत परिश्रम न करें।
३. पूर्ण सात्विक भोजन जिसमें लेसन-प्याज-भटा-गाजर-मसूर-गोभी-परबल-कद्दू-कूष्माण्ड नहीं खावे।
४. विवाद-क्रोध-हिंसा-अपशब्दों का प्रयोग कभी नहीं करना चाहिये।
५. आज के दिन गर्म जल से स्नान नहीं करे। संभव हो तो प्रवाहित जल में स्नान करें। नहीं हो तो कुएँ के जल से या तीर्थ जल से स्नान करे अथवा पवित्र जल से स्नान करें।
६. सभी वयोवृद्धों को प्रणाम पूजा करें उनका आशीर्वाद ग्रहण करें।
७. इस दिन अनाथ-विकलांगों को, निर्धनों को अवश्य ही भोजन करावें।
८. जन्म दिन में देव मंदिरों-ग्रामदेवताओं-गृह देवताओं तथा कुल देवता का भी स्मरण पूजा करें।
९. जन्म दिन में प्रतिज्ञा करे कि इतने वर्ष की आयु हो गई, अभी तक सद्गुण-सदाचार जीवन में नहीं आ पाया। आज से सदाचार-परोपकार-भगवान के भजन का दृढ़ नियम बनाऊंगा।

१६. अन्त्येष्टि संस्कार -

गरुड़पुराणकार प्रेतखंड में लिखते हैं कि पुत्र को माता-पिता के मरण काल में आतुर दान कराना चाहिए, इसमें लोभ कार्पण्य न करे। उस समय अष्ट दान करे- तिल, लोहा, सोना, वस्त्र, नमक, सप्तधान्य, पृथ्वी और गाय का दान करे। ये अष्टदान महापापों के नाशक हैं। (गरुड़ पुराण प्रेत खंड ८/३०-१०६) जब देखे कि व्यक्ति की नाड़ी-हृदयगति आदि अवरुद्ध होने वाली हो तब भूमि में गोबर से लिम्पन करे। गोबर से लिम्पन करने पर यमदूत नहीं छूते। तुलसी के समीप ही गोबर से लीपे, वहाँ तिल को फैलाकर उस पर कुश डाले फिर श्वेत आसन पर शालिग्राम को स्थापित करे। शालिग्राम शिला को निकट स्थापित करने से मुक्ति प्राप्त होती है। जो तुलसी की मञ्जरी पूर्वक प्राण त्याग करता है वह यम से नहीं देखा जाता। तुलसी दल मुख में रहने वाला

निश्चित विष्णु पुर जाता है। पिशाच, राक्षस, भूत, प्रेत और यम दूत बिना लिपी भूमि में खाट पर, अन्तरिक्ष में प्रवेश करते हैं। मुख में शालिग्राम का चरणामृत डाले। स्वर्ण-खंड डाले। गंगाजल डाले। एक हजार चान्द्रायण करना तथा मृत्यु काल में गंगाजल का एक बार पान कराना एक बराबर है।

(गरुड़पुराण ८/३१)

भूमि पर उतारे हुए पिता को देखकर यदि पुत्र दान देता है तो वह गया श्राद्ध और सौ अश्वमेध के बराबर होता है। भूमिष्ठं पितरं पुत्रो यदि दानं प्रदापयेत्।

तद्विशिष्टं गया श्राद्धादश्वमेघ शतादपि। (निर्णय सिन्धु पृ. ११५६)

आसन्नमरण के लिए मोक्षधेनु (मोक्ष प्राप्ति के लिए) ऋणधेनु (सात जन्म के ऋण दोष मुक्ति लिये) (पापधेनु) समस्त पापों के नाश के लिए दान देने का विधान है।

(वैतरणीधेनु) नरकोत्तीर्ण के लिए वैतरणी धेनु का दान करे।

(निर्णय सिन्धु ११५८)

ब्रह्मपुराण में वर्णन है कि मरणासन्न व्यक्ति तांबे के पात्र में तिल तथा स्वर्ण रखकर दान करे। (ब्रह्मपुराण)

मरणधर्मा के कान में गीता-भागवत-विष्णु-सहस्त्रनाम-श्री राम नाम का उच्चारण करे।

ऋग्वेद के इस मंत्र का पाठ अवश्य करे-ऊँ नानानं वा उ नो धियो विव्रतानि जनानाम्। तक्षारिष्टं रुतं भिषग्ब्रह्मा सुन्वत मिच्छन्तीन्द्रायेन्दो परिस्त्रव।

जरतीभिरोषधीभिः पर्णेभिः शकुनानाम्। कार्मारो अश्मभिक्षुर्भिर्हिरण्यवन्त मिच्छन्तीन्द्रायेन्दो परिस्त्रव कारुरहं ततो भिषगुपत प्रक्षिणीनना। नाना धियो वसूयवोऽनु गाइव तस्थिमेन्द्रायेन्दो परिस्त्रव ३ अश्वो वोत हा सुखं रथं हसनामुपमन्त्रिणः शेपो रोमण्बन्तौ भेदौ वारिन्मण्डूक इच्छतीन्द्रायन्दौ परिस्त्रव।
ऋग्वेद ९/११२/१-४ मधुपर्क मरणासन्न को देने का विधान वाराह पुराण कार ने लिखा है।

ऊँ गृहाण चेमं मधुपर्क माद्यं संसार नाशन करं त्वमृतेन तुभ्यम् नारायणेनरचितं भगवत्प्रियाणां दाहे च शान्तिकरणं सुरलोक पूज्यम् नरस्य मृत्युकाले तु परलोक सुखावहम्।

(वाराह पुराण ११५९)

स्कन्दपुराण में वर्णन है कि मरणासन्न द्विज के मृत्युकाल में शालिग्राम शिला वक्ष पर

रख देवे प्राणान्त के पश्चात् पंचगव्य में प्रक्षालन कर शालिग्राम भगवान् को विराजित पृथक् कर अन्त्येष्टि कर्म संपन्न करे।

दाहकर्ता का कर्त्तव्य - मरण के पश्चात् व्यक्ति को शोक त्याग कर सर्व प्रथम मुण्डन कराना चाहिए। मुण्डन का निर्णय मुण्डन प्रकरण में देखें। इस मुण्डन में नख और कक्ष का काटना मना है।

''अतो मुण्डनमावश्यकं नख कक्ष विवर्जितम्''

दक्षिण दिशा की तरफ मुख करके मुण्डन करावे। इसके पश्चात् नूतन वस्त्र धारण करे। तीर्थ जल एवं अन्य जलों में तीर्थ का आवाहन करे, शव का स्नान करावे। सात स्वर्ण के खंड दोनों नेत्रों में, मुख में दोनों कानों में, दोनों नासिका छिद्रों में स्वर्ण खंडों को छोड़े। जौ या चावल का आटा लेकर उसमें तिल-मधु-घृत मिलाकर छह पिण्ड दाहकर्ता निर्माण करे।

शव का मुण्डन - शव को भी मुण्डन करावे। नये वस्त्र धारण करावे। चंदन से चर्चित करे, माला आदि धारण करावे। शव को दक्षिण में पैर करके सुला देवे।

नग्न प्रेत का दाह न करे-

''दरिद्रोऽपि न दग्धव्यो कस्याञ्चिदापदि''

ब्रह्मपुराण में वर्णन आया है कि किसी भी आपत्ति में महान् दरिद्रता में भी नग्न देह का दाह न करे। ऐसा आश्वलायन ने भी कहा है।

छह पिण्डों को देने का स्थान निर्णय - प्रथम पिण्ड शव के दक्षिण तरफ, दूसरा गृह के द्वार पर, तृतीय पिण्ड शव के मार्ग यात्रा में चौराहे पर, चौथा पिण्ड अर्द्धमार्ग पर, पाँचवाँ पिण्ड चितास्थल पर, छठवाँ पिण्ड हवन के पश्चात् दाह पूर्व शव के ऊपर देना होता है।

शव को किस दिशा से निकाले - जिस नगर या ग्राम में चारों ओर मार्ग की व्यवस्था होवे वहाँ मृतक ब्राह्मण को पश्चिम की ओर से, क्षत्रिय को उत्तर दिशा से, वैश्य को पूर्व की ओर से, शूद्र को दक्षिण दिशा की ओर से निकाले। पुनः श्मशान पर ले जावे।

मृतक की शव-यात्रा का नियम :

१. मृतक की श्मशान - यात्रा में शव के साथ उसके पुत्र, कुटुम्बी अर्थी उठावें। पुत्र माता-पिता की अर्थी कंधा लगाते हैं तो उनको अश्वमेध यज्ञ का फल पाँव-पाँव

पर प्राप्त होता है। जो अपने माता-पिता की शव-यात्रा तथा दाहादि संस्कार में सम्मिलित नहीं होते वे दुर्भाग्य-युक्त माने जाते हैं।

२. मृतक व्यक्ति को श्मशान ले जाते समय मृतक पुरुष से अधिक आयु वाले पुरुषों को मृतक के आगे चलना चाहिये। छोटी आयु वाले पुरुषों को मृतक के पीछे-पीछे चलना चाहिये।

३. मृतक की अन्त्येष्टि क्रिया के पश्चात् वापिस आने पर छोटी आयु वाले आगे-आगे आवें। जो बड़ी अवस्था वाले हैं वे पीछे-पीछे चलें।

४. मृत व्यक्ति के गोत्र वालों, कुटुम्बी जनों, इष्ट-मित्रों और पड़ोसियों को अवश्य ही शव यात्रा में सम्मिलित होना चाहिये।

५. श्मशान से लोटते समय फिर उस ओर मुड़कर नहीं देखना चाहिये।

श्मशान में पुनः जीवित होने पर - कुछ ऐसे प्रमाण भी प्राप्त हुये हैं कि व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है, वह पुनः जीवित हो जाता है। कुछ तो नरक का प्रत्येक दृश्य देखकर लौटे हैं, ऐसे लोगों ने स्वयं लेखक को प्रत्यक्ष दृश्यों का विवरण भी सुनाया है- जिसमें नरक-दर्शन वैतरणी से गाय द्वारा पार होना आदि-आदि चित्रगुप्त के लेखा-जोखा का ग्रन्थ दर्शन। धर्मराज का निर्देश आदेश भी श्रवण किये हैं। बहुशः अनेक प्रमाण कई लोगों को प्राप्त है। कल्याण के अंक में ऐसी घटनाओं के बहुत संकेत है।

कदाचित् श्मशान पर ले जाने के पश्चात् मृतक जीवित हो उठे, तब शास्त्र की आज्ञा है कि वह व्यक्ति पुन: गृह-प्रवेश के योग्य तब तक नहीं है, जब तक उसकी विधिवत् शान्ति न हो जावे। विद्वानों को चाहिये कि उस गृह में दूध मिश्रित घृत से गूलर की समिधाओं को सम्पृक्त कर, आठ हजार **गायत्री मंत्र** से हवन करावे। यदि ब्राह्मण हो तो **गायत्री मंत्र** से आहुति करे। यदि क्षत्रिय हो तो **त्र्यम्बक मंत्रों** की आहुति करे। यदि वैश्य हो तो भी मंत्रों से आहुति करे। शूद्र के लिए कोई अनुष्ठान न करे। गाय, कांसा और दक्षिणा का दान करे। तब उसका घर में प्रवेश करावे। यदि बिना शान्ति का गृह-प्रवेश कराता है तो उसके कुटुम्बी की मृत्यु होता है।

(मयूर चित्रे गर्गः)

अचिराव्यमृत्यु मायाति हृत दार परिग्रहः॥ (निर्णय सिन्धु १२७६)

यदि घर में ही मरकर जीवित हो जावे तब शांति करने का विधान प्राप्त नहीं होता है, अत: फिर शांति आवश्यक नहीं है।

वर्णेतर का दाह अधिकार - इस विषय में वर्तमान के तथा कथित वे लोग जिनकी

शास्त्र और आर्ष ग्रन्थों में निष्ठा नहीं है।

वे कपोल-कल्पित अनर्थकारी अर्थों के अनुसार कुछ ऐसी भ्रान्ति बनाते हैं। जो शास्त्र तथा परलोक दोनों दृष्टि से सर्वथा अनर्थकारी है। शास्त्र तो प्रत्यक्ष भगवान् का ही आदेश है वह चारों वर्णों को अंकुशित निर्देशित आदेशित और संतुलित करता है। उसमें कोई विवेकशील व्यक्ति विचार न करे। इसमें शास्त्राज्ञा है कि द्विज (ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य) के शव को शूद्र स्पर्श न करे। यदि ऐसा होता है तो मृतक के संबंधियों को विशेष दोष लगता है, साथ ही मृतात्मा का अनर्थ होता है।

जाबालि ने कहा है "शूद्र से जलाया हुआ विप्र उत्तम गति को प्राप्त नहीं होता उसके पाप की शुद्धि के लिए चान्द्रायण, पराक और प्राजापत्य व्रतों को करके प्रायश्चित्त करे।"

(निर्णय सिन्धु पृ. ११५९)

ब्राह्मण अपने से हीन वर्ण के, क्षत्रिय अपने से हीन वर्ण को और वैश्य अपने से हीन वर्ण के शव को स्पर्शन करे। जो उच्च वर्ण वाला अपने से हीन वर्ण को स्पर्श करता है वह पतित हो जाता है। किन्तु उसके विपरीत पूर्वतः वर्णित है कि यजमान का दाह पुरोहित करे यदि उसके कुल वंश में कोई नहीं होवे तब ऐसा शास्त्रादेश है। शास्त्र ने कहा है कि जिसके वंश मे कोई न होवे तो राजा को चाहिये कि उसके शव संस्कार को उसी जाति के व्यक्ति से सम्पन्न करावे।

मृतक को रजस्वला सूतिका के स्पर्श में - इस विषय में यह उच्च एवं नीच वर्ण का विचार नहीं है क्योंकि शास्त्र ने कहा है कि रजस्वला और सूतिका स्त्री को भी शव के स्पर्श को निषेध किया है। यदि ऐसा करती है तो, उनको भी प्रायश्चित्त कहा है।

(नि.सि.पृ. ११५९)

शुद्र से अस्थि-स्पर्श में- यदि शूद्र से अस्थि-स्पर्श हो जावे तो उन अस्थियों को गंगाजल-पंचगव्य से धोकर जौ का आटा लपेटकर पुनः दाह-संस्कार करे। यदि हड्डियाँ दग्ध हो जावे तो वहाँ की मृतिका को गंगा आदि में प्रवाहित करें।

(नि.सि.पृ. ११४४)

ब्रह्म पुराण में कहा कि विप्र भी अपने से हीन वर्ण का दाह न करे, यदि मोह-लोभ या स्वेच्छा से करता है तो उसी की जाति को प्राप्त होता है।

निर्णय सिन्धु में हीन वर्ण के संस्कार के पश्चात् तीन कृच्छ्र करे। (पृ.१०७५)

पंचक मरण में विचार- यदि धनिष्ठा-शतभिषा-पूर्वाभाद्रपद-उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्र में किसी का मरण होता है तो पुत्तल विधान करना आवश्यक है।

विधान- कुशा की पाँच प्रतिमा बनाकर ऊन से लपेट कर जौ के जल मिश्रित आँटे का लपेटकर संकल्प करे-**ॐ विष्णुः अमुकोऽहं अमुक गोत्रस्य अमुकस्य पञ्चक मरण जनित वंशानष्टि परिहारार्थं पञ्चक विधिं करिष्ये।** नाम मंत्रों से पाँचों पुतलों को, १. **प्रेत वाहनाय नमः** कहकर सिर पर, २. **प्रेत सखायनमः** से नेत्रों पर, ३. **प्रेतपाय नमः** से कुक्षि में, ४. **प्रेत भूमिपाय नमः** से नाभि नर, ५. **प्रेत हर्त्रे नमः** से पैरों पर कुश पुतला रखकर दाह करे।

पंचक मरण में पञ्चक के पश्चात् दाह करने पर फिर पञ्चक शान्ति का ही विधान है। पञ्चक शान्ति विधि देना यहाँ अभीष्ट नहीं है।

त्रिपुष्कर योग में निर्णय - यदि त्रिपुष्कर योग में मरण का दाह होता है तो वहाँ भी इसी प्रकार कुश के ३ पुतला बनाकर प्रथम

१- मृतितिथ्यधिष्ठातृ देवतायै नमः से सिर पर।

२- मृतिवाराधीशायनमः नेत्रों पर रखे।

३- मृति त्रिपात्रक्षत्राधिपतये नमः कहकर मृतक के बायें कुक्षि पर रखकर अनंतर दाह करें। फिर शान्ति भी करे।

दाह में निषिद्ध अग्नि - चाण्डाल की अग्नि, अपवित्र, अग्नि, सूतकाग्नि, पतित की अग्नि और चिता की अग्नि से दाह न करे।

मृत शरीर की अप्राप्ति में दाह निर्णय - यदि विदेशादि में मरण हो अथवा किसी प्रकार से मृत शरीर उपलब्ध न हो। जलादि में सर्वथा प्रवाहित हो तो ऐसी स्थिति में (तीन सौ साठ कुशाओं से प्रेत बनावे या पलाश से प्रेत निर्माण करे। सिर के स्थान में चालीस पलाश पत्र, ग्रीवा में दश, दोनों भुजाओं में पचास-पचास छाती के बीस, उदर में बीस, कटि देशों में तीस, ऊरु के दोनों भागों में सौ, जानु और जंघाओं में तीस, (दोनों जंघाओं में पन्द्रह-पन्द्रह) पैरों की अंगुली में दस (दोनों पैरों में पाँच-पाँच) रखकर पुतला बनावें। (भविष्य पुराण) निर्मित पुतला में मस्तकादि में नारिकेलादि का प्रस्थापन क्रम भी है- नारियल मस्तक में तालु में तुंबी, मुख में पंचरत्न, जिह्वा में केला का फल, नेत्रों में दो कौड़ी, नासिका में कालक, कानों में ब्राह्मी, केश में वट प्ररोह, आंतों में कमल की नाली, वसा के स्थान में। मिट्टी, धातु के स्थान में हरिताल गन्धक, वीर्य के स्थान में पारा, पुरीष (विष्ठा) के स्थान में पीतल, सन्धियों में तिल की खली, मांस में जौंकी पिट्ठी, रक्त के स्थान में शहद (मधु), त्वचा में मृग चर्म, स्तनों में जम्बीर फल, नासिकाओं में गेंदा, नाभि में कमल, वृषणों में भंटा, लिंग में लाल मूली इस प्रकार कृष्ण

मृग चर्म में लपेटकर, ऊर्ण सूत्र में बंधन करे, ऊपर से जौ का आटा लपेटे। पुनः दाह करे।

(नि.सि.पृ. ११४६)

अज्ञात व्यक्ति की १२ वर्ष तक प्रतीक्षा करे। कोई पता न चले तो तेरहवें वर्ष में फिर सम्पूर्ण दाहादि क्रिया करे। तदनुसार अशौच भी माने। गृहकारिका में लिखा है-बाल हो तो 20 वर्ष बाद, मध्यम युवा हो तो 15 वर्ष बाद, वृद्धावस्था वाला हो तो 12 वर्ष बाद पश्चात पुतला दाह करे। (निर्णय सिन्धु पृ. ११४६)

शव को स्नान-चंदन-यज्ञोपवीत-माला आदि धारण करावे।

शवयात्रा में राम नाम उच्चारण- शव यात्रियों को परस्पर भगवत्नाम स्मरण करते हुए शव को ले जाना चाहिए। हमारे यहाँ ॐ तथा रामनाम का अत्यन्त शास्त्रीय तथा आध्यात्मिक प्रभाव है।

चिता पर तुलसी काष्ठ का प्रभाव - उत्तर-दक्षिण की ओर लम्बाई करके यज्ञीय काष्ठों की चिता का निर्माण करे। चिता पर तुलसी काष्ठ का प्रक्षेप करे। स्कन्द पुराण-पद्म पुराण में वर्णन आया है कि तुलसी के काष्ठ के स्पर्श-मात्र से ही मृतक की सद्गति होती है। तुलसी, तुलसी, वृक्ष के सन्निकट, छाया में या मुख में तुलसी दल रखकर मरने वाला भगवद्धाम का ही अधिकारी होता है। इसी प्रकार चिता पर तुलसी काष्ठ विस्तीर्ण करने पर शव के दाह से दिवंगत-आत्मा का अत्यन्त कल्याण होता है। कण मात्र भी तुलसी का मृतक से स्पर्श होने पर दिव्यलोक की प्राप्ति और नरक-त्राण होता है। चिता पर तीर्थों का भी आवाहन करावें।

शव को चिता पर कहाँ पैर करे - पं. चतुर्थीलालजी अपनी अन्त्येष्टि कर्म पद्धति में दक्षिण की ओर सिर करके दाह लिखा है "**शनैर्दक्षिण शिर संशवं स्थापयेत**" अर्थात् दक्षिण में सिर करे, उत्तर में पैर रखे। कर्मकाण्ड के विशिष्ट विद्वान् पं. वायुनन्दनजी मिश्र वे अपने "**श्राद्ध संग्रह**" ग्रन्थ में उत्तर की ओर सिर अर्थात् दक्षिण की ओर पैर रखना लिखा है- "**पुरुषं उदकशिरसं च निधाय**" स्मार्ताग्नि में निर्णय सिन्धुकार कहते हैं दक्षिण दिशा की तरफ पैर करे। सीधा लिटावे। अग्निहोत्रियों के विषय में है। उत्तर दिशा की तरफ सिर करे। यह सामवेदियों के भिन्न विषय में है।

(निर्णय सिन्धु ११७२)

निष्कर्षतः आचार्यों के दक्षिण तथा उत्तर दोनों ओर सिर करके दाह का संकेत है। ... उत्तर सिर के प्रमाण अधिकांश आचार्यों के है। आहिताग्नि को दक्षिण सिर का

विधान लिखा है।

पति-पत्नी के एक साथ मरने पर - यदि पति-पत्नी एक साथ मृत्यु हो जावे तो एक ही चिता पर दाह करे। किन्तु पिण्ड पृथक्-पृथक् करे। अस्थि संचयन एक साथ होगी। जलाञ्जलि तथा पिण्डदान पृथक्-पृथक् होने का बोधाय तथा प्रचेता दोनों का मत है। (निर्णय सिन्धु पृ. ११८२)

नग्न शव का दाह निषेध - किसी भी आपत्ति में रहकर और दरिद्र होने पर भी नग्न प्रेत का दग्ध नहीं करना चाहिये।

"दरिद्रोऽपि न दग्धव्यो नग्नः कस्याञ्चिदापदि" (नि.स.पृ. ११८१)

ऊपर का एक वस्त्र अवश्य श्मशान वासी को देना चाहिये।

"निःशेषस्तु न दग्धव्यः शेषं किञ्चित् त्यजेन्नरः" (पृ. ११८२)

दाह विधि निर्णय - जिस स्थान पर शव-दाह करना है उस भूमि का सम्यक् शोधन कर, गोबर जल मिलाकर उसे भूमि को पवित्र करे। सरसों के दाने छिड़ककर भूत-प्रेतादि को वहाँ से विदा करे, उस स्थान पर गाय, गंगा आदि तीर्थों का आवाहन करे। उस स्थान पर कुश-तिल-चंदन यज्ञ काष्ठ (देवदारु, वील, पलास, पीपल, वट, हरिद्रा और तुलसी के काष्ठ से या वट-पीपल-पाकर-गुलर और आम के काष्ठ से चिता का निर्माण करे। मंत्र पूर्वक तीर्थों के आह्वान का जल चिता पर छिड़के। उसी जल को शव के ऊपर भी छिड़के। फिर चिता पर घृत का छिड़काव करे। मृतक ऊपर के वस्त्र को श्मशान बासी को देवे। फिर शव को (पुरुष को उल्टा सुलावे, स्त्री को चिता पर सीधा सुलावे) किन्तु अन्य आचार्यों का मत है कि स्त्री-पुरुष दोनों को सीधा ऊर्ध्वमुख लिटावे। फिर दाह की क्रिया को सम्पन्न कराने के पूर्व ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि द्विजों को शव के सिर भाग में वेदी बनाकर पंच भू संस्कार करे। शव की दाहाग्नि (साधक नाम की अग्नि स्थापना करे। आचार्य की पूजा करे। गंधादि से अग्नि की पूजा करे पश्चात् यजुर्वेद के ३४ मंत्रों की आहुतियों को देवे। तत्पश्चात् छठवाँ पिण्ड का दान करे। फिर भगवान् विष्णु का ध्यान तथा पूजन करे।

फिर पुत्र अपसव्य होकर तृण पुंज में अग्नि प्रज्वलित कर पुरुष के सिर प्रदेश में तथा स्त्री के पैरों की ओर से चिता में अग्नि लगावे। कुछ आचार्यों का मत है कि हवन की अग्नि से अग्नि लेकर चिता में लगावे।

"पुरुषस्य शिरः प्रदेशे स्त्रिया पाद प्रदेशेऽग्निं दद्यात्"

कपाल क्रिया - हमारे यहाँ कपाल क्रिया का विशिष्ट महत्त्व है। अनेक अनभिज्ञ

जनों को कपाल क्रिया में निष्ठुरता की गंध आती है। किन्तु यह परंपरा शास्त्रीय ही नहीं पिता के संस्मरणीय वात्सल्य और पुत्र के परम अनिवार्य कर्तव्यों का प्रणबद्ध निर्देश है।

नौ प्रकार की वायु हमारे शरीर में रहती है- प्राण, अपना, व्यान, उदान, समान कृकल, देवदत्त और धनञ्जय नामक वायु मस्तक में रह जाती है। वह कपाल क्रिया के द्वारा ही निकलती है। अत: कपाल क्रिया शास्त्रीय है न कि निर्दयतापूर्ण।

अर्द्धे दग्धेऽथवा पूर्णे स्फोटयेत्तस्य मस्तकम्।

गृहस्थानां तु काष्ठेन यतीनां श्री फलेन च॥

(गुरुड़ पृ. १०/५६)

गृहस्थ का मस्तक काष्ठ से संन्यासी के मस्तक पर नारियल को फोड़ देना चाहिये।

गाढ़रोदन - कपाल क्रिया के पश्चात् चिता में एक आहुति देवे तत्पश्चात्-रोदितण्यं ततो गाढ़ं तेन तस्य सुखंभवेत्-इस समय का रोदन करने से प्रेतात्मा को भी सुख होना लिखा है। इसके पूर्वापर रोदन उचित नहीं माना गया है।

रोदन में आशौच - अपनी जाति वालों के मरण पर अस्थि संचयन के पूर्व रोवे तो स्नान करने से शुद्धि होती है। अस्थि-संचयन के पश्चात् रोवे तो आचमन करने से पवित्रता होती है। यदि शूद्र के मरण में ब्राह्मण रोवे तो अस्थि संचयन के पूर्व रोने से ३ दिन का सूतक रहता है। अस्थि संचयन के बाद रोवे तो 1 रात्रि का सूतक रहता है। सपिण्डों के मरण रोदन में कोई दोष नहीं है। उतना समय आशौच का निकल जाने पर स्नान मात्र से शुद्धि है।

(निर्णय सिन्धु)

काष्ठाहुति - शव के जलने के मध्य में तिल-घृत की एक आहुति देवे। फिर चंदन-तुलसी आदि के काष्ठ के साथ तिलादि को चिता पर छोड़कर प्रदक्षिणा करे। गरुड़ पुराण-कार ने ऐसा कहा है।

अप्रदक्षिण क्रम से प्रदक्षिणा - आश्वलायन ने कहा है- सव्य होकर संस्कार के अनंतर चिता की अप्रदक्षिण क्रम से प्रदक्षिणा करे, वामावर्ती क्रम में चिता को बिना देखे चलना चाहिये।

(निर्णय सिन्धु पृ. ११८५)

कव्यादाय नभस्तुम्यमिति मंत्रेणा शवं प्रदक्षिणीकृत्य समिधं जुहुयात्। ततः वामा वर्तेन (अप्रदक्षिण क्रम बायीं ओर से घूमकर) **''चिता भूमि भवेक्षमाणः स्नानार्थं गच्छेयुः''**

धर्म सिन्धु में कहा कि "ततश्चितामप्रदक्षिणं सर्वे पर्य्या आवृत्य सचैलं स्नात्वा तिलाञ्जलिं दद्युः। वामावर्ती अप्रदक्षिण क्रम से पूरी प्रदक्षिणा करे तब स्नान को जावे।"

(धर्म सिन्धु पृ. ७३२)

चिता की बायीं परिक्रमा करते हुए जल स्थल पर जावे लौटकर फिर चिता की ओर न देखे।

मृतयति संस्कार निर्णय – संन्यासी का पुत्र या शिष्य मुण्डन कर ३ कृच्छ्रों को करे नूतन कलश जल से भरकर मंत्राभिमंत्रित कर रूद्रसूक्त, विष्णु सुक्त, आपोहिष्ठा आदि से स्नान करावे। चंदनादि से चर्चितकर वाद्य यंत्रों से शुद्ध देश में स्थल में या जल में समाहित करे। समाधि दे देवे। संन्यासी के दंड बराबर गहरा गड्ढ़ा बनावे उसको पंचगव्य से प्रोक्षण करे, कुशा बिछाकर, शंख के जल पुरुष सूक्त और ॐ कारों को पढ़कर स्नान कराकर फिर अष्टाक्षर मंत्रों से ॐ नमो नारायणाय से षोडशोपचार से पूजा कर तुलसी की माला से विभूषित कर, दण्ड को दाहिने हाथ में स्थापित कर देवे "**हंस शुचिषदिति**" मंत्र को हृदय पर, भृकुटि के मध्य में पुरुष सूक्त, **ब्रह्मजज्ञानं** सिर पर जपे। **ॐ भूर्भवः स्वः** मंत्र से शंख से कपाल का भेदन करे श्री फल नारियल से कपाल फोड़े। गर्त में रख देवे फिर पुरुष सूक्त का जपता हुआ नमक से भर देवे। ऊपर से रेत या मिट्टी से भरे, जिससे शृगालादि दूषित न करे। नदी में प्रवाहित करना हो तो कपाल क्रिया कर कुशों से ढककर आहुतियों से अभिमंत्रित कर पाषाण बाँधकर उसको ॐ स्वाहा मंत्र से प्रवाहित करे। फिर हंस परमहंस की समाधि का वर्णन है। कुटीचक्र को दग्ध करे, बहूदक को गड्ढा में रखें। संन्यासी को एकोदिष्ट, जलदान, पिण्डदान, आशौच, प्रेतकर्म इन कार्यों को न करे, केवल वार्षिक को करे। कुछ आचार्यों का कथन है कि आत्मा, अन्तरात्मा परमात्मा को चार-चार अंजलि जल देवे। शुक्ल पक्ष में मरे तो केशवादि द्वादश नामों से तर्पण करे। पायस बलि देवे। दश दिन तक दीपदान, पायस बलिदान करे। ११वें दिन पार्वण श्राद्ध करे, द्वादशाह में नारायणबलि करे। फिर तेरह यतियों को या ब्राह्मणों को भोजन करावे।

(धर्म सिन्धु पृ. ७८७)

दाहान्त स्नान निर्णय – आदित्य पुराण में वर्णित है कि आदि में वस्त्र को प्रक्षालन कर उसी ही वस्त्र से आच्छादित होकर सब मैल को दूर करने वाले सचैल स्नान करे।

पहिले पहिने हुए वस्त्र का प्रक्षालन कर फिर से पहिनकर स्नान करे। "**अपनः शोशुचदघमग्ने**" ऋग्वेद १/९७/१ इस मंत्र में बायें हाथ की अनामिका अंगुली से जल

का आलोडन करे। स्नान कार्य में वृद्धों को आगे करे। बालकों को आगे करके निकले।

दाहकर्त्ता को वस्त्र त्याग - ग्राम के बाहर जाकर प्रेत से स्पर्श किये हुए वस्त्रों को अन्त्यज (चाण्डाल) या सेवक आदि के लिए त्यागकर बाद में स्नान करे

(निर्णय सिन्धु पृ. ११८८)

तिलाञ्जलि जलाञ्जलि निर्णय - दाहानन्तर दोनों हाथों से जलाञ्जलि देनी चाहिए। सपिण्डों से गोत्रियों को प्रेत का नाम लेकर तीन-तीन अञ्जलि देनी चाहिए। तिलाञ्जलि देने का भी विधान है। प्रचेता ने कहा है- सचैल स्नान कर पत्थर पर ब्राह्मण को दश अञ्जलि, क्षत्रिय को बारह अञ्जलि, वैश्य को पन्द्रह अञ्ललि, और शूद्र को तीस अञ्जलि देकर घर में प्रवेश करना चाहिए।

आश्वलायन ने एक बार नाम गोत्र स्मरण कर अञ्जलि देने का कहा है। प्रचेता ने नित्य तीन अञ्जलि, तृतीय दिन तीन अञ्जलि देना कहा है। किसी आचार्य ने प्रथम दिन एक, द्वितीय दिन दो अञ्जलि, तृतीय दिन तीन अञ्जलि, चतुर्थ दिन चार अञ्जलि, पाँचवे दिन पाँच, छठवें दिन छै, सातवें दिन सात, आठवें दिन आठ, नौवें दिन नौ, एक क्रम में प्रथम दिन की अञ्जलि, द्वितीय दिन ६ अञ्जलि, तृतीय दिन ९ अञ्जलि, इस क्रम से वृद्धि करे। मदन रत्न के नित्य दो अञ्जलि की वृद्धि कही है। भारद्वाज ने प्रथम में एक, द्वितीय में तीन, तृतीय में पाँच, चतुर्थ में सात, पाँचवे में नौ, छठे में ग्यारह, सातवें में तेरह, आठवें में पंद्रह, नौवे में सत्रह, दशवें दिन उन्नीस, इसके पश्चात् सौ अञ्जलि अपनी-अपनी शाखा के अनुसार देवे।

याज्ञवल्क्य ने कहा है सखा, विवाहिता कन्या या बहिन, भानजा, श्वसुर, ऋत्विज, के लिए जलदान करे। पारस्कर ने नाना, नानी, आचार्य, श्वसुर, मामा, शिष्य और राजा को भी अञ्जलि देना कहते हैं। अपनी-अपनी परम्परा के अनुसार जलाञ्जलि तिलाञ्जलि दे।

(निर्णय सिन्धु पृ. ११८४)

वर्तमान में तीन अञ्जलि देने की परम्परा का निर्णय चल रहा है।

जलाञ्जलि में किस दिशा में मुख करना - प्रचेता ने कहा है-प्रेत के बान्धव वृद्धों के क्रम से जल में उतर कर स्नान करें तथा जल के समीप वस्त्र तथा यज्ञोपवीत अपसव्य कर शूद्र दक्षिणाभिमुख, ब्राह्मण उत्तर की ओर मुख करे, वैश्य और क्षत्रिय पूर्वाभिमुख होकर जलदान करें। शंख ने कहा है क्षत्रिय और वैश्य वस्त्र को अपसव्य करें। किन्तु योगीश्वर ने कहा है ब्राह्मण दक्षिणाभिमुख होकर अञ्जलि दें। शूद्र के लिए इन्होंने कोई नियम नहीं लिखा, सभी नियम सभी को समान नहीं लिखे है।

(निर्णय सिन्धु पृ. ११८४)

पत्थर पर जलाञ्जलि का नियम नहीं लिखा है। सचैल किनारे पर देवे।

लोक परम्परा में सभी दक्षिणाभिमुख करके अञ्जलि देते हैं अतः वही अधिक प्रचलित है। अपनी-अपनी शाखा तथा परम्परा के अनुसार करे। दक्षिण मुख अधिक प्रशस्त है। क्योंकि सभी प्रेतकार्य दक्षिण मुख होकर होते हैं इसके पश्चात् यमगाथा गायन करते हुए घर की ओर आवे।

जीवित पितृक द्वारा जलदान - जिनके माता-पिता जीवित है वे सगोत्री तथा सपिण्डों के मरने पर और नाना-आचार्य आदि को तिलाञ्जलि दे सकते हैं। (धर्म सिन्धु पृ. ५८३) इनको एक अञ्जलि जल देने का विधान है।

गृहद्वार पर निम्न पत्र का चर्वण - "ततो गृहद्वारमागत्य निम्न पत्राणिदंतै विर्दश्य आचम्य" गृहद्वार पर आकर नीम की कुछ पत्तियों का चवर्ण करने का संकेत प्रायः सभी पद्धतियों ने किया है।

मनुजी ने लिखा है-

अनुगम्येच्छया प्रेतंज्ञाति मज्ञातिमेव च।
स्नात्वा सचैलः स्पृष्ट्वाग्निं घृतंप्राश्य विशुद्धियति॥ (मनु. १०३)

स्वजातीय या विजातीय मृत व्यक्ति के साथ इच्छा से श्मशान जाकर पुरुष सचैल स्नान, अग्नि-स्पर्श और घृत के चाटने से शुद्ध होता है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से रोगाक्रान्त मृतक के साथ चलने के कदाचित् रोगाणुओं का प्रभाव न हो जावे अतः नीम पत्रों का चवाना एवं घृत प्राशन करना लिखा है।

"विदाश्य निम्बपत्राणि नियताद्वारिवेश्मनः"

(याज्ञवल्क्य स्मृति १२-१६)

दाहान्त भोजन निर्णय - मृतक के परिवार जनों को दाह के पश्चात् लौटकर घर का भोजन नहीं करना चाहिए। अयाचित प्राप्त भोजन बिना नमक का ही करें। दुकान से क्रय करके भी भोजन कर सकता है। किन्तु घर का अन्न न पावे।

क्रीतलब्धाशना भूमौ स्वयेयुस्ते पृथक (नि.सि.पृ. ११८७)

जमीन पर चटाई पर शयन करे। १२ दिन तक नमक न खावे, सेन्धुव नमक (सेंधा नमक) खा सकते हैं। ब्रह्मचर्यादि व्रतों को पूर्णता से धारण करे।

अस्थि संचय निर्णय - आश्वलायन ने एकादशी, त्रयोदशी, अमावस्या, तीनों उत्तरा, तीनों पूर्वा को छोड़कर अस्थि संचय करे। छन्दोगपरिशिष्ट में कहा है, दूसरे या तीसरे दिन अस्थि संचय करे। विष्णु स्मृति और कात्यायन स्मृति में चौथे दिन अस्थि संचय को कहा है। माधवीय में यम ने कहा है मंगल, रवि, शनि, युग्मतिथि, अष्टमी, विद्धानवमी, कृतिका, उ.फा., उ.षा., मृग., चि., धनिष्ठा में अस्थि संचय न करे।

पिण्डदाता के जन्म नक्षत्र तथा कृतिका, पुनर्वसु, उ.फा., विशाखा, उ.षा. पूर्वाभा. में भी अस्थि संचय न करे। ब्रह्मपुराण में कहा है- ब्राह्मण को चौथे दिन, राजा को पाँचवें दिन, वैश्य को नौंवे दिन, शूद्रों को दशदिन बाद अस्थि उठाना चाहिए। पलाशदाह में सद्य: अस्थि संचय करे। श्मशान देवताओं को बलिदान देकर अस्थि संचय करना चाहिए। सिर, छाती, हाथ, बगलों और पैरों की हड्डियों को ही ग्रहण करे। उनको पञ्चगव्य से स्नान कराके रेशमी वस्त्र में लपेटकर मिट्टी के नूतन पात्र में रखकर किसी पेड़ की जड़ में स्थापन करना चाहिये। अन्य अस्थियों-भस्म को जल में प्रवाहित करे। फिर चिता को गोबर से लीपकर स्वच्छ कर देवे।

अस्थि विसर्जन निर्णय - पुत्र, लड़की का लड़का और सहोदर भाई ही अस्थि को गंगा में विसर्जन करे। मातृकुल और पितृकुल को छोड़कर अन्य कुल की अस्थियों का विसर्जन करता है वह चान्द्रायण व्रत से शुद्ध होता है।

ब्रह्माण्ड पुराण में कहा है-माता-पिता पूर्वज और अच्छे बान्धवों की अस्थियों को जो गंगा में ले जाते हैं। उनको धन-आरोग्य-ऐश्वर्य और माता-पिता के ऋण से उऋण प्राप्त होता है।

एवमस्थीनि निक्षिप्यवंशस्य जनकस्य वा। पुत्रारोग्य धनेश्वर्य युक्तो भवति नान्यथा। दत्वा द्रव्यं वाहकाय पितृणामनृणमे भवेत्॥

अस्थि विसर्जन - स्नान करके पंचगव्य से सिंचन कर स्वर्ण, मधु, घृत और तिल मिला फिर मृतिका के पिण्ड पुट में रखकर दक्षिण दिशा को देखते हुए ''नमोऽस्तुधर्माय'' कहकर जल में प्रवेश कर कहे कि 'स मे प्रीत:' वह प्रेत मुझसे प्रसन्न हो, यों कहकर फेंक देवे। सूर्य का देखकर ब्राह्मण को दक्षिणा देने से इन्द्र के सदृश गति होती है। यम ने कहा है जिसकी अस्थि गंगा में जाती है उसकी पुनावृत्ति नहीं होती।

गंङ्गातोयेषु यस्थास्थि क्षिप्यते शुभकर्मण:।

न तस्य पुनरावृत्ति ब्रह्म लोकात्सनातनात्॥

भविष्य पुराण में कहा है-पंच गंगा में जिसकी अस्थि जाती है उसकी सनातन

ब्रह्मलोक से पुनरावृत्ति नहीं होती।

पंचगंगा- १ काबेरी, तुंगभद्रा, कृष्णावेणी, त्रिवेणी, गौतमी, गंगा।

काबेरीतुंगभद्रा च कृष्णवेणी च गौतमी।

जाह्नवी चेति विख्याताः पंचगंगा प्रकीर्तिताः॥

अस्थि विसर्जन का समय – गुरु और शुक्र के अस्त में, मलमास में गंगा में हड्डी न डाले। किन्तु दश दिन के अंदर विसर्जन हो तो दोष नहीं है। दश दिन के भीतर जिनकी अस्थि गंगा में गिरती है। उनको गंगा में ही मरण का फल मिलता है। ऐसा वृद्ध मनु ने कहा है। नि.सि.पृ. १२०१ अस्थि विसर्जन के साथ द्रव्य-सुवर्ण, मोती, चाँदी, प्रवाल मूंगा, नीलम को अस्थि के मध्य में प्रक्षेप करे तो शुद्धि होती है, अन्यथा नहीं होती।

विसर्जन का समय – अस्थि रखने वाले यात्री को लघुशंका तथा शौच में अस्थि दूर रखना चाहिए।

पुनः आचमन करते हुए अस्थि धारण करे। नि.सि.पृ. १२०५, अस्थि ले जाने का नियम -

अस्थियों को पञ्चगव्य से और पंचामृत से स्नान कराकर, अगर-कपूर-कस्तूरी-चंदन और कंकोल से लेप करके पुष्प से पूजन कर रेशमी वस्त्र में बाँधकर, मंजीठ के रक्त-वस्त्र से, नेपाल कम्बल से फिर शुद्ध मृतिका का लेपन कर तांबे के डिब्बा में रखकर अस्थि ले जावे। यदि तीर्थ जाता हुआ व्यक्ति गौण रूप से अस्थि विर्सजन करे तो पहिले तीर्थ के कार्यों से निर्वृत्त हो जावे तब अस्थि विसर्जन करे।

अनुपनीत का अस्थि संचय नहीं लिखा है। जिस मृतक का जनेऊ यज्ञोपवीत नहीं हुआ है उसकी अस्थि का संचय न करे।

"**अनुपनीतस्य न संचयनम्**" नि.स.पृ. ११०६

डॉ. श्री रामाधार जी उपाध्याय
विद्यावाचस्पति
(एम.ए., पी.एच.डी. संस्कृत)
अन्य प्रकाशित ग्रन्थ
हनुमच्चरित का क्रमिक विकास (शोधग्रंथ)
मुण्डन दाह अशौच निर्णय
व्यास पीठ की आचार संहिता
वेद-पुराण शास्त्र परिचय
रामायण के कतिपय समाधान
एकादशी व्रत निर्णय एवं महात्म्य
नारी का धर्म एवं स्वरूप विमर्श
भक्ष्याभक्ष्य निर्णय
प्रकाशनार्थ
भक्तिमती भीलनी
सदाचार निर्णय
प्रायश्चित निर्णय
वेदों में मूर्ति पूजा
प्राप्ति स्थल :
17, रामायणम् "श्रीराम कुंज", श्रीराम कॉलोनी,
होशंगाबाद रोड, भोपाल (म.प्र.) मो : 9754269821
श्री हनुमान निकेतन आश्रम, बीकलपुर (रायसेन) मध्यप्रदेश
मो : 9826787902, 9754269821